संघ लोक सेवा आयोग

लोक भविष्य निधि

EPFO

APFC/EO & AO

अध्ययन सामग्री एवं प्रश्नकोश

प्रधान सम्पादक

Anand K. Mahajan

लेखन सहयोग

परीक्षा विशेषज्ञ समिति

कम्प्यूटर ग्राफिक्स

बालकृष्ण त्रिपाठी, चरन सिंह, भूपेन्द्र मिश्रा

सम्पादकीय कार्यालय

12, चर्च लेन, प्रयागराज-211002

9415650134

Email : yctap12@gmail.com

website : www.yctbooks.com/www.yctfastbook.com/www.yctbooksprime.com

© All rights reserved with Publisher

प्रकाशन घोषणा

प्रधान सम्पादक एवं प्रकाशक आनन्द कुमार महाजन ने E:Book by APP YCT BOOKS, से मुद्रित करवाकर वाई.सी.टी. पब्लिकेशन प्रा. लि., 12, चर्च लेन, प्रयागराज-211002 के लिए प्रकाशित किया।

इस पुस्तक को प्रकाशित करने में सम्पादक एवं प्रकाशक द्वारा पूर्ण सावधानी बरती गई है फिर भी किसी त्रुटि के लिए आपका सुझाव और सहयोग सादर अपेक्षित है।

किसी भी विवाद की स्थिति में न्यायिक क्षेत्र प्रयागराज होगा।

विषय-सूची

औद्योगिक सम्बन्ध एवं श्रमिक विधि
(Industrial Relation & Labour Law)

- **औद्योगिक विधिशास्त्र–**भारत में श्रम नीति, भारत में औद्योगिक क्रान्ति, औद्योगीकरण की बुराइयाँ, श्रम समस्याएँ, औद्योगिक शान्ति एवं सामंजस्य, औद्योगिक सम्बन्ध, श्रम विधान के सिद्धान्त, भारत में श्रम विधि का विकास, औद्योगिक न्याय निर्णयन ○ कारखाना अधिनियम, 1948 ○ औद्योगिक नियोजन (स्थायी आदेश) अधिनियम, 1946 ○ व्यवसाय संघ अधिनियम, 1926 ○ औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 ○ हड़ताल और तालाबन्दी ○ **मजदूरी संदाय अधिनियम, 1936 –** मजदूरी का संदाय और मजदूरी से कटौतियाँ, अधिनियम के अन्तर्गत के प्राधिकारी ○ कर्मचारी भविष्य-निधि योजना एवं प्राधिकारी ○ न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 ○ कर्मचारी भविष्य-निधि और प्रकीर्ण उपबन्ध अधिनियम, 1952 ○ प्रसूति अधिनियम 1961 ○ अध्याय सम्बन्धित प्रश्नोत्तर ---------- 4-45

लेखांकन एवं सामान्य लेखा सिद्धांत
(Accounting & General Accounting Principles)

- **लेखांकन की प्रकृति, उद्देश्य एवं अवधारणाएँ –** लेखांकन की शाखायें, लेखा का सिद्धान्त, लेखांकन सिद्धान्तों की सीमायें, लेखांकन प्रथायें, लेखांकन समीकरण, लेखांकन की अवधारणायें, वित्तीय विवरण तैयार करना, लाभ-हानि के डेबिट की मदें, लाभ-हानि खाते से सम्बन्धित समीकरण, आर्थिक चिट्ठा या स्थिति विवरण, सम्पत्तियों एवं दायित्वों का वर्गीकरण ○ **पूँजीगत प्राप्ति और आयगत प्राप्ति –** पूंजीगत और आयगत प्राप्ति में अन्तर, पूँजीगत प्राप्ति और आयगत प्राप्ति में अन्तर के नियम, पूँजीगत लाभ एवं आयगत लाभ, पूँजीगत हानियाँ एवं आयगत हानियाँ ○ **ह्रास –** मूल्य ह्रास की विभिन्न पद्धतियाँ ○ **साझेदारी –** साझेदारी के सम्बन्ध में आवश्यक तत्व, साझेदारी संलेख की अनुपस्थिति में साझेदारी सम्बन्धी नियम, पूंजी पर ब्याज की गणना की आवश्यकता, ख्याति एवं उसका मूल्यांकन, ख्याति मूल्यांकन विधि, ख्याति का मूल्यांकन एवं ख्याति खोलने की परिस्थितियाँ, नये साझेदार का प्रवेश, साझेदार के प्रवेश की आवश्यकता, ख्याति खाता खोलना, मृत साझेदार के उत्तराधिकारियों को भुगतान, धीरे-धीरे सम्पत्तियों की रकम को प्राप्त करना और उसी प्रकार उनका बँटवारा करना, साझेदार अथवा साझेदारों के दिवालिया हो जाने के कारण विघटन हो जाना, रूप परिवर्तन के कारण फर्म का सिद्धान्त, फर्म को कम्पनी के हाथ बेचना, साझेदार सम्बन्धी नियम, साझेदारी का विघटन ○ कम्पनी लेखे ○ **अंश –**अंश पूंजी के प्रकार, अंशों का निर्गमन और उनका अभिलेखन, अंशों पर माँगें, प्रीमियम पर लेखा, अंशों का अपहरण ○ **डिबेन्चर –** परिभाषा, डिबेन्चर न्यास-विलेख, मोचनीय डिबेन्चर, डिबेन्चर धारकों का रजिस्टर ○ लेखांकन शब्दावली ○ अध्याय सम्बन्धित प्रश्नोत्तर ---------- 46-117

अंकेक्षण (लेखा परीक्षा)
(Auditing)

- अंकेक्षण के उद्देश्य, अंकेक्षण के प्रकार, आन्तरिक अंकेक्षण, आन्तरिक अंकेक्षण तथा स्वतंत्र अंकेक्षण में अंतर, चालू अंकेक्षण, चालू अंकेक्षण के लाभ, चालू अंकेक्षण की हानियाँ, हानियों से बचने के उपाय, सामयिक अंकेक्षण के लाभ, सामयिक अंकेक्षण की हानियाँ, चालू अंकेक्षण तथा सामयिक अंकेक्षण में अन्तर, चालू अंकेक्षण तथा मध्ये अंकेक्षण में अन्तर, अंकेक्षण सम्बन्धी विशेष तथ्य, अंकेक्षक की तैयारी, अंकेक्षण-कार्यक्रम के बनाने में सावधानी, अंकेक्षण कार्यक्रम की हानियाँ, अंकेक्षक की कार्य-पद्धति, परीक्षण जाँच व अंकेक्षक, पुस्तकों की बाकियों का अंतर मिलाना, आन्तरिक जाँच, आन्तरिक अंकेक्षण, आन्तरिक जाँच तथा आन्तरिक अंकेक्षण, आंतरिक अंकेक्षण तथा वैधानिक अंकेक्षण, अंकेक्षक की नियुक्ति, आकस्मिक या अस्थाई नियुक्तियाँ, कुछ तथ्य, विशेष तथ्य, अध्याय सम्बन्धित प्रश्नोत्तर ---------- 118-148

बीमा
(Insurance)

■ परिचय, लक्षण, सिद्धान्त, जीवन बीमा, अग्निबीमा और सामुद्रिक बीमा, अनुबन्ध में अंतर, महत्वपूर्ण शब्दावली, विगत वर्षो में पूछे गये प्रश्न, सम्बन्धित प्रशनोत्तर ---------- 149-164

सामाजिक सुरक्षा
(Social Security)

■ परिचय, उद्देश्य, इतिहास, प्रकृति, सीमायें, विगत वर्षो में पूछे गये प्रश्न ---------- 165-169

कम्प्यूटर अनुप्रयोग
(Computer Application)

■ परिचय, उद्देश्य, प्रकार, इतिहास, विशेषताएँ, कम्प्यूटर सिस्टम के कम्पोनेन्ट्स, आउटपुट डिवाइसेस, कम्प्यूटर मेमोरी, साफ्टवेयर, हार्डवेयर, कम्प्यूटर लैंग्वेज, इंटरनेट, प्रकार, नेटवर्क टोपोलॉजी, ट्रांसमिशन मीडिया, सर्च इंजन, कम्प्यूटर हैकिंग, विगत वर्षो में पूछे गये प्रश्न, अभ्यास प्रश्न ---------- 170-240

Scheme and Syllabus

Combined Recruitment Test (CRT) for the posts of Enforcement Officers/ Accounts Officers (Item No. 1 above) and Assistant Provident Fund Commissioner (Item No. 2 above) is as under:-

(I) Scheme:

(i) The test will be of two hours duration

(ii) All questions will carry equal marks.

(iii) The test will be objective type questions with multiple choices of answer.

(iv) The medium of the test will be both English and Hindi.

(v) There will be penalty for wrong answers. Every wrong answer will carry a deduction of one-third of the marks assigned to that question. If no answer is marked for a question, there will be no penalty for that question.

(II) Syllabus:

The syllabus of the Test broadly comprises the following topics:-

(i) General English- To evaluate candidate's understanding of English language & workman – like use of words.

(ii) Indian Culture, Heritage and Freedom Movements.

(iii) Developmental Issues and Present Trends in Indian Economy.

(iv) Governance and Constitution of India.

(v) General Science and Basic Knowledge of Computer Applications.

(vi) Elementary Mathematics, Statistics and General Mental Ability.

(vii) Industrial Relations, Labour Laws and Social Security in India.

(viii) Principles of Accountancy, Auditing and Insurance.

(ix) Current Events of National and International Importance.

1.

औद्योगिक सम्बन्ध एवं श्रमिक विधि
(Industrial Relation & Labour Law)

औद्योगिक विधिशास्त्र

बीसवीं शताब्दी में विधि शास्त्र की एक शाखा के रूप में औद्योगिक विधि शास्त्र का विकास हुआ। इस शाखा का विकास यद्यपि स्वतंत्रता-प्राप्ति के पश्चात् हुआ परन्तु इसकी उत्पत्ति के लक्षण औद्योगिक विकास की प्राथमिक अवस्था में ही मौजूद थे। स्वतंत्रता के पूर्व यह शाखा विकसित नहीं थी। आज भारतीय जनसंख्या का अधिसंख्य भाग उद्योगपति, कर्मकार एवं उनके परिवारों के रूप में औद्योगिक विधि द्वारा प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित है जबकि अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित लोगों की संख्या इससे कहीं अधिक है।

विधिशास्त्र की इस शाखा ने स्वामी तथा सेवक की पुरानी विधि को नकार दिया है और 'संविदा की स्वतंत्रता' पर आधारित अहस्तक्षेप के पुराने सिद्धान्तों को समाज के व्यापक हित में प्रभावहीन बना दिया है क्योंकि प्राचीन सिद्धान्त स्वामी तथा सेवक के बीच मधुर सम्बन्धों के विकास में अपर्याप्त पाया गया है। विधानों एवं न्यायिक-निर्वचनों द्वारा नियोक्ता के पुरातन अधिकार अपनी इच्छानुसार 'कर्मकार को भाड़े पर लेना और निकाल देना' पर अनेक प्रतिबन्ध लगा दिये गये हैं। इस प्रकार औद्योगिक विधि के क्षेत्र में उठाया गया यह कदम अत्यंत नवीन एवं अद्‌भुत है।

अब स्वामी एवं सेवक के अर्थ में परिवर्तन देखा जा सकता है। वह व्यक्ति जो धन लगाता है अब स्वामी नहीं है और वह जो श्रम करता है, मात्र सेवक नहीं कहा जा सकता है। स्वामी अपनी इच्छानुसार कर्मकार की नियुक्ति कर तो सकता है परन्तु उसे हटा नहीं सकता है। विधान द्वारा श्रमिकों के हितों की सुरक्षा की गयी है। किसी भी उपक्रम में जब नियोजक एवं श्रमिक दोनों ही भागीदार हैं, पूँजीपतियों के तमाम विरोधों के बावजूद श्रमिकों द्वारा प्रबन्ध में भागीदारी के अधिकार को मान्यता दे दी गयी है। बीसवीं शताब्दी के दौरान समूचे विश्व में औद्योगिक समाज संविदा से हैसियत की ओर अग्रसर हो रहा है जो कि एक सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक एवं विधिशास्त्रीय स्थिति है।

यह सभी परिवर्तन औद्योगीकरण की देन थे। औद्योगीकरण से कुछ नयी सामाजिक एवं आर्थिक समस्याएँ उत्पन्न हुई। उद्योगपतियों का सुझाव स्वाभाविक रूप से अपने धन की बढ़ोत्तरी की ओर होता है और यदि इस प्रवृत्ति पर अंकुश न लगाया जाय तो अमीर और अमीर तथा गरीब और गरीब होते जाते है। इस प्रकार औद्योगिक समाज में दो वर्ग बन गये जिन्हें क्रमशः धनी तथा निर्धन की संज्ञा दी गयी।

आर्थिक असमानता दोनों वर्गों में संघर्ष का कारण है। कर्मकार जब एक होकर नियोजक के सामने आये तो औद्योगिक प्रतिष्ठानों में हड़ताल एवं तालाबन्दी जैसी क्रियाएँ शुरू हो गयीं जिसका असर वस्तुओं की कीमतों पर पड़ा। फलस्वरूप श्रमिक अपने श्रम की अधिक कीमत माँगने लगे। औद्योगीकरण के साथ-साथ प्रजातांत्रिक विचारधाराओं का भी प्रादुर्भाव हुआ। इस विचारधारा ने कर्मकारों में अधिक अधिकार के प्रति चेतना जागृत की। स्वामी एवं सेवक के बीच हुए संघर्ष के कारण कुछ सिद्धान्तों का जन्म हुआ जिन्हें विश्व के समस्त विकसित देशों में मूलभूत सिद्धान्त के रूप में स्वीकारा गया। वे सिद्धान्त इस प्रकार हैं –

- आर्थिक संघर्ष अवश्यम्भावी है, इस तथ्य को स्वीकारना।
- अहस्तक्षेप से कल्याणकारी राज्य में परिवर्तन।
- त्रिपक्षीय (कर्मकार, नियोजक तथा सरकार) समझौता वार्ता।
- कर्मकारों का सम्मिलित होकर संस्था या संघ बनाने का अधिकार।
- सेवा शर्तों को और अधिक उपयुक्त बनाने हेतु सामूहिक रूप से सौदेबाजी करने का कर्मकारों का अधिकार।
- राज्य, सामाजिक हितों के रक्षक के रूप में।
- राज्य के विधानों से न्यूनतम मानदण्डों की प्रत्याभूति होनी चाहिए।

भारतीय संविधान को औद्योगिक विधिशास्त्र के विकास का श्रेय जाता है जिसने औद्योगिक सम्बन्ध को लोगों के सामने रखा। भारतीय संसद एवं भारतीय उच्चतम न्यायालय ने भी औद्योगिक विधिशास्त्र के विकास में अपना योगदान दिया है।

औद्योगिक विधिशास्त्र के तहत कारखाना प्रणाली द्वारा उत्पन्न मानवीय समस्याओं का अध्ययन किया जाता है। समाज के समुचित विकास के लिए आवश्यक है कि नियोजित एवं नियोजक के मध्य अच्छे सम्बन्ध हों। औद्योगिक कर्मकार एवं उनके परिवार इससे प्रत्यक्ष रूप से सम्बद्ध है।

यद्यपि औद्योगिक विधिशास्त्र का विकास काफी समय से हो रहा है फिर भी इसका प्रयोग कुछ मामलों में प्रतिबन्धित है। यह विषय मुख्यतया सामाजिक न्याय पर आधारित है जो स्वयं गतिशील एवं परिवर्तनीय है। अतः स्पष्ट है कि यह विषय अभी अपने अंतिम स्वरूप को नहीं प्राप्त कर सका है। औद्योगिक विधि शास्त्र, सामान्य विधिशास्त्र को स्थानापन्न करने में उसी प्रकार असमर्थ है जैसे सामाजिक न्याय, विधिक न्याय को स्थानापन्न नहीं कर सकता क्योंकि सामाजिक न्याय के बारे में अपना-अपना विचार व्यक्त करते समय न्यायालय, न्यायाधिकरण तथा विवाचक विधि को छोड़ नहीं सकते। अतः यह कहना अच्छा होगा कि औद्योगिक विधिशास्त्र सामान्य विधिशास्त्र की एक शाखा मात्र है और औद्योगिक समाज से उसी प्रकार सम्बन्धित है जैसे सामान्य विधिशास्त्र सम्पूर्ण समाज से सम्बन्धित है।

भारत में श्रम नीति

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् ऐसी श्रम नीति का निर्माण किया गया जो कर्मकारों में आत्मविश्वास पैदा कर सके। जिसे 'त्रिपक्षीय श्रम-नीति' के नाम से जाना गया। इस 'त्रिपक्षीय' नीति में तीन पार्टियाँ थीं – व्यवसाय संघ जो कर्मकारों का प्रतिनिधित्व करते थे, नियोजक तथा सरकार। इस प्रकार के प्रयास में प्रतिनिधि का कार्य सलाह-सुझाव देने तक ही सीमित था। तीनों पक्षों में सरकार का कार्य अधिक महत्वपूर्ण था।

वार्षिक श्रम-सम्मेलनों में कर्मकारों को प्रबन्ध में भागीदार बनाने, कर्मकारों की शिक्षा, कर्मकार समिति तथा न्यूनतम मजदूरी जैसे विधानों पर बल दिया गया। सन् 1958 में सोलहवें श्रम सम्मेलन में एक निर्णय के तहत उद्योग में अनुशासन संहिता के प्रयोग को स्वीकारा गया। इसके तहत अवपीड़न तथा उत्पीड़न जैसी क्रियाओं का सहारा न लिया जाय एवं अंशतः हड़ताल या तालाबंदी को त्यागकर शिकायत प्रक्रिया को स्वीकारा जाये।

त्रिपक्षीय श्रम नीति एक ऐसी प्रणाली है जो श्रम एवं पूँजी के बीच निहित हितों के पहचान पर बल देती है। उत्पादन तथा राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के निर्माण में पूँजी एवं श्रम दोनों एक दूसरे के भागीदार हैं। श्रम नीति इस तथ्य पर आगे बढ़ी है कि पूरे समाज तथा कर्मकारों को आर्थिक लाभ का उचित अंश मिल रहा है अथवा नहीं। इसी विचारधारा को ध्यान में रखकर बोनस भुगतान अधिनियम, 1965 को संसद में पारित किया गया जिसमें कर्मकारों के बोनस सम्बन्धी नियम है।

भारतीय श्रम नीति के प्रमुख अवयव निम्नलिखित हैं –

- राज्य को परिवर्तन एवं कल्याणकारी कार्यक्रमों के लिए उत्प्रेरक तथा सामुदायिक हितों को अभिरक्षक के रूप में मान्यता देना।
- अन्याय की स्थिति में कर्मकारों के शान्तिपूर्ण विरोध प्रदर्शन के अधिकार को मान्यता देना।
- कर्मकारों की स्थिति को ऊँचा उठाना।
- त्रिपक्षीय सलाह मशविरा।
- औद्योगिक शान्ति स्थापना को प्राथमिकता देना।
- नियोजक एवं नियोजित के बीच भागीदारी को बढ़ावा देना।
- उचित मजदूरी, मानदण्ड एवं सामाजिक सुरक्षा सुनिश्चित करना।
- आपसी समझौता, सामूहिक सौदेबाजी एवं ऐच्छिक विवाचन को प्रोत्साहन देना।
- कमजोर पक्ष को उचित उपचार दिलाने हेतु राज्य द्वारा हस्तक्षेप।
- उत्पादन एवं उत्पादकता को बढ़ावा देना।
- विधानों का समुचित प्रवर्तन।

भारत में औद्योगिक क्रान्ति

- विश्व के अन्य देशों की तरह भारत में भी औद्योगीकरण का तात्पर्य उद्योग-धन्धों के विकास से है जिसमें स्वामी एवं सेवक के बीच विभिन्न परिस्थितियों में विभिन्न प्रकार के सम्बन्ध होते हैं।
- उद्योग-धन्धों की पुनर्स्थापना के परिणामस्वरूप उत्पादकों के कुछ निश्चित स्थानों पर एकत्रित होने के कारण यहाँ मजदूरों की संख्या में वृद्धि हुई।
- गाँव में रहने वाले कर्मकार गाँव में आजीविका के अभाव के कारण औद्योगिक क्षेत्रों की ओर पलायन करने लगे, फलस्वरूप देहाती हथकरघे उद्योग धीरे-धीरे समाप्त होने लगे और इससे तैयार सामान, मशीनों से तैयार सामान तुलनात्मक रूप में सस्ते एवं अच्छे साबित हुए।
- उद्योग-धंधों के विकास ने समाज में कुछ बुराइयाँ भी उत्पन्न कीं, यहाँ तक कि शिल्पकार की स्थिति मजदूरी कमाने वाले के रूप में बदल गयी।

औद्योगीकरण की बुराइयाँ

औद्योगीकरण की कुछ अन्तर्निहित बुराइयाँ थीं जिन्हें दो भागों में बाँटा जा सकता है –

(क) आर्थिक बुराइयाँ –

- कारखाना पद्धति में कर्मकारों को दी जाने वाली मजदूरी, उनकी न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए भी अपर्याप्त थी।
- हथकरघा पद्धति में शिल्पकार को वस्तुएं बनाने से मनोवैज्ञानिक संतोष होता था जबकि कारखाना पद्धति में वह मशीन का एक उपकरण मात्र बन कर रह गया।
- प्रारम्भ में कर्मकारों की नियुक्ति सुरक्षित नहीं थी।

(ख) सामाजिक बुराइयाँ –

- कम मजदूरी पाने से कर्मकारों का जीवन-यापन मुश्किल हो रहा था। अतः उनकी पत्नियाँ एवं बच्चे भी कारखानों में कार्य करने लगे। मालिकों ने इस मौके का फायदा उठाकर उन्हें कम मजदूरी पर नियुक्त किया तथा उनकी शारीरिक दशा पर कोई ध्यान नहीं दिया।
- गाँवों से शहर की ओर शिल्पकारों के पलायन से शहरी आबादी बढ़ने लगी तथा आवास की कमी से गन्दी बस्तियों का विकास हुआ जिसका प्रभाव लोगों के स्वास्थ्य पर पड़ा।
- कारखानों में बड़ी दुर्घटनाओं का होना साधारण बात थी। दुर्घटनाओं को नियोजन का एक अन्तर्निहित भाग माना जाता था।
- कारखाने की कार्य प्रणाली में मजदूरों को बहुत लम्बे समय तक कार्य करना पड़ता था जो बहुत खतरनाक था तथा उनके विश्राम एवं मनोरंजन की कोई व्यवस्था नहीं थी।

औद्योगीकरण की यह बुराइयाँ तथा नियोजक एवं नियोजित के बीच सामंजस्य के अभाव में नई समस्याएँ उत्पन्न हुई जिन्हें श्रम समस्या की संज्ञा दी गयी।

श्रम समस्याएँ

श्रम समस्याओं ने समाज के लिए एक नई समस्या उत्पन्न कर दी है जिनका समाधान करना आवश्यक है। नियोजक अपना ध्यान अपनी मशीनों एवं तकनीकी ज्ञान पर ही केंद्रित रखते थे और मानवीय श्रम को कोई महत्व नहीं देते क्योंकि वह उसे आसानी से प्राप्त कर सकते थे। कर्मकार जो कि गरीब एवं अशिक्षित थे अपने अधिकारों के प्रति अनभिज्ञ थे एवं इनकी सामाजिक-आर्थिक स्थिति नियोजक की हैसियत से काफी नीचे थी। जिससे वह उनके साथ स्वतंत्र रूप से कोई बातचीत नहीं कर सकते थे।

आने वाले समय में यह समस्या और जटिल हो गयी। इसका कुप्रभाव यह हुआ कि इन समस्याओं के निराकरण हेतु सरकार को बाध्य होना पड़ा। साथ ही साथ समाज सेवी संस्थाओं जैसे - भारत सेवक समाज, समाज सेवा लीग तथा कुछ औद्योगिक सामाजिक कार्यकर्ताओं ने भी इन बुराइयों के विरोध में आवाज उठायी। इन परिस्थितियों में कुछ नियोजकों ने भी इन समस्याओं की गम्भीरता को महसूस किया और इन्हें कम करने की तरफ ध्यान दिया।

नियोजकों ने महसूस किया कि संतुष्ट मजदूर अधिक उत्पादन देगा तथा उत्पादन क्षमता को भी बढ़ायेगा। तत्पश्चात् सरकार का ध्यान भी इन समस्याओं की ओर गया क्योंकि विवादों के कारण देश की आर्थिक और सामाजिक स्थिति को खतरा पैदा हो रहा था। सम्पूर्ण व्यवस्था के भंग होने का भय रहता है। औद्योगिक विवादों की रोकथाम राष्ट्रीय नीति में एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है, अतः राज्य उन समस्याओं से जो औद्योगिक विवादों को जन्म देती है अपने को अलग नहीं रख सकता।

राष्ट्रीय सरकार ने स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् कारखानों में श्रमिकों की दशा के सुधार पर बल दिया क्योंकि कोई भी उद्योग औद्योगिक शान्ति और सहयोग के अभाव में प्रगति नहीं कर सकता। अतः हमारे लिए यह आवश्यक है कि हम अपनी आर्थिक नीति का निर्धारण इस प्रकार करें जिससे कर्मकारों को कार्य करने के लिए उचित वातावरण तथा लाभ में उचित हिस्सा प्राप्त हो सके। हमारा संविधान सामाजिक न्याय की गारंटी देता है।

सामाजिक न्याय का अर्थ सामाजिक आर्थिक उद्देश्यों की प्राप्ति से है। ''सामाजिक अभियंत्रण तथा सामाजिक कार्यकलापों में विधि की इस शाखा ने जितनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है उतना किसी अन्य शाखा ने नहीं। यहीं पर औद्योगिक विधि की अन्य विधाओं से स्वयं को अलग करती है और अपनी अभिव्यक्ति के लिए एक सर्वथा नवीन विधिशास्त्र के विकास की प्रतीक्षा कर रही है।''

औद्योगिक शान्ति एवं सामंजस्य

'औद्योगिक शान्ति' का अर्थ नकारात्मक एवं सीमित है। यह कलह एवं संघर्ष सम्पत्ति पर बल देता है। औद्योगिक सामंजस्य का अर्थ स्वीकारात्मक एवं विस्तृत है जो समय, सहयोग तथा नियोजक एवं नियोजित के मध्य भागीदारी पर बल देता है। किसी भी देश की आर्थिक प्रगति के लिए औद्योगिक सामंजस्य का होना अत्यंत आवश्यक है। आर्थिक प्रगति औद्योगिक सामंजस्य एवं औद्योगिक शान्ति पर होती है। औद्योगिक सामंजस्य नियोजन एवं नियोजित के मध्य सहयोग पर बल देता है जिससे उत्पादन बढ़ता है। यह स्वस्थ औद्योगिक सम्बन्धों पर बल देता है। अतः औद्योगिक सामंजस्य में नियोजक, नियोजित एवं समाज का सहयोग अपेक्षित है।

औद्योगिक सम्बन्ध

छोटे रूप में उद्योग एक सामाजिक संसार है किसी भी देश की आर्थिक स्थिति उसके औद्योगिक सम्बन्ध पर निर्भर करती है। अपनी भौतिक आवश्यकता की पूर्ति हेतु प्रत्येक व्यक्ति को अपने वातावरण से संघर्ष करना पड़ता है। औद्योगिक क्रान्ति असंतुलन पैदा करती है क्योंकि वह उद्योग में कार्यरत लोगों के हितों और अधिकारों को बुरी तरह कुचलती है परन्तु उसे नियंत्रित नहीं करती हैं। यह धन के वितरण में विषमता का कारण बनती है क्योंकि उत्पादन के साधनों पर समाज के प्रमुख लोगों का नियंत्रण रहता है जो श्रम को अपने अधिकतम फायदे के लिए इस्तेमाल करते हैं। यदि राज्य औद्योगिक प्रकरणों में सामाजिक नैतिकता को बनाए रखने हेतु हस्तक्षेप नहीं करता है क्योंकि स्वस्थ सामाजिक व्यवस्था को बनाए रखने हेतु सामाजिक नैतिकता आवश्यक है। आर्थिक उन्नति औद्योगिक शान्ति से जुड़ी हुई है।

अतः औद्योगिक सम्बन्ध नियोजक एवं नियोजित के लिए ही नहीं बल्कि समाज के लिए भी महत्वपूर्ण है। राज्य का हस्तक्षेप इसलिए भी आवश्यक है क्योंकि कमजोर वर्ग का शोषण रोकने में वही सक्षम है। औद्योगिक व्यवस्था के लिए केवल उद्योगपति ही नहीं बल्कि राज्य भी समान रूप से दोषी है क्योंकि उपयुक्त सामाजिक व्यवस्था को बनाए रखना उसका दायित्व है। अमीर और गरीब के बीच अंतर कम करना भी राज्य का दायित्व है। अपने देश में औद्योगिक तथा तकनीकी उन्नति पर ही बल दिया जा रहा है परन्तु तकनीकी उन्नति सामाजिक असंतुलन को और बढ़ाती है। अतः सामाजिक सम्बन्धों के पुनर्निर्धारण हेतु यह आवश्यक है कि सरकार सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में अध्ययन एवं अनुसंधान को बढ़ावा दे।

श्रम विधान के सिद्धान्त

किसी भी देश में श्रम विधान सामाजिक साम्यता, सामाजिक न्याय, अन्तर्राष्ट्रीय एकरूपता एवं राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के सिद्धान्तों पर होना चाहिए।

सामाजिक न्याय

सामाजिक न्याय के तहत सम्मिलित हैं – लाभों और उद्योग के अन्य लाभों को उद्योगपतियों और कर्मकारों में सम्यक् वितरण और कर्मकारों को हानिकर प्रभावों से सुरक्षा प्रदान करना जिससे कि उनके स्वास्थ्य, सुरक्षा और नैतिकता को बनाए रखा जा सके। प्रारम्भ में कर्मकार की स्थिति केवल एक दैनिक मजदूर की होती थी। अर्थात् उसे उतने दिन की मजदूरी मिलती थी जितने दिन वह यथार्थतः काम करता था। कर्मकार प्रतिकर अधिनियम, 1923 एक कर्मकार को किसी वैयक्तिक क्षति के सम्बन्ध में प्रतिकर दिये जाने की व्यवस्था करता है जो कि उनके नियोजन के क्रम में घटित हुई हो। इसी प्रकार न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, कारखाना अधिनियम और मजदूरी भुगतान अधिनियम, सामाजिक न्याय के सिद्धान्त पर आधारित विधियों के अन्य उदाहरण हैं।

हमारे देश में श्रम कल्याण का अपना एक विशिष्ट महत्व है क्योंकि हमारा संविधान लोक कल्याण को बढ़ावा देने, काम करने की मानवोचित दशाएँ प्रदान करने और सभी कर्मकारों को अवकाश तथा सामाजिक और सांस्कृतिक अवसरों पर पूर्णरूपेण लाभ उठाने का उपबन्ध करता है।

सामाजिक और आर्थिक न्याय की अवधारणा क्रान्तिकारी अवधारणा है। यह विधि शासन को जीवन प्रदान करती है और एक लोक कल्याणकारी राज्य के आदर्श को प्रदान करती है। भारतीय संविधान में सामाजिक न्याय को राज्य के नीति निदेशक के रूप में माना गया है। सामाजिक न्याय, सामाजिक हित के अनुरूप होना चाहिए। महत्वपूर्ण बात यह है कि सामाजिक न्याय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रदान की गयी विधि के विरुद्ध नहीं हो सकता है। यद्यपि भारतीय संविधान में सामाजिक-न्याय को परिभाषित नहीं किया गया है फिर भी इसका तात्पर्य प्रचलित बुराइयों को दूर करते हुए सामाजिक और आर्थिक उद्देश्यों की पूर्ति करना है, और इन उद्देश्यों की पूर्ति करने के लिए नये कानूनों का बनाया जाना है।

सामाजिक सुरक्षा

औद्योगीकरण की प्रक्रिया जैसे-जैसे आगे बढ़ती है वैसे-वैसे मजदूरी की समस्या एवं सामाजिक सुरक्षा की अवधारणा बढ़ती जाती है। कर्मकारों की बीमारी, मातृत्व-लाभ, वृद्धावस्था आदि के सम्बन्ध में उन्हें विशेष संरक्षण प्रदान करने की आवश्यकता है।

सामाजिक सुरक्षा के तहत राज्य ऐसे जोखिमों के विरुद्ध सुरक्षा प्रदान करता है जिनके विरुद्ध बचाव का प्रबन्ध कोई व्यक्ति या समूह नहीं कर सकते हैं।

सामाजिक सुरक्षा के उपायों का दोहरा **महत्व** है – **पहला** यह कि लोक-कल्याणकारी राज्य के उद्देश्यों की पूर्ति की दिशा में महत्वपूर्ण कदम है और **दूसरे** यह कि वे कर्मकारों को इस योग्य बनाते हैं कि वे अपने काम और कौशल से अधिक सक्षम हो सकें। सामाजिक सुरक्षा का अभाव उत्पादन में बाधक होता है और एक स्थायी और कुशल श्रम बल के गठन को रोकता है इसलिए यह कोई भार नहीं अपितु धन को एक ऐसे कार्य में लगाना है जिससे कि और भी अच्छे लाभ प्राप्त किये जा सकते हैं। राष्ट्रीय श्रम आयोग के अनुसार "सामाजिक सुरक्षा जीवन के एक तथ्य के रूप में बदल गयी है और इन उपायों ने आज के कठिन जीवन में स्थिरता और सुरक्षा की एक भावना उत्पन्न कर दी है।"

हमारे देश में सामाजिक सुरक्षा सम्बन्धी विधान समय-समय पर अधिनियमित किये गये हैं। ऐसे विधानों में मातृत्व सेवा लाभ अधिनियम हैं जो भिन्न-भिन्न राज्यों में पारित किया गया है। उत्तर प्रदेश में यह अधिनियम, 1962 में पारित किया गया था। यह अधिनियम महिला कर्मकारों को प्रसूतिकालीन अवकाश प्राप्त करने का उपबन्ध करता है। कर्मचारी भविष्य निधि अधिनियम 1952 द्वारा सेवानिवृत्ति विषयक लाभों का उपबन्ध किया गया है। औद्योगिक विवाद अधिनियम में छंटनी तथा काम से अलग रखने सम्बन्धी लाभों का प्रावधान किया गया है। राज्य कर्मचारी बीमा अधिनियम, 1948 में कर्मचारियों को चिकित्सीय, बीमारी, अशक्यता, आश्रित और प्रसूतिकालीन लाभों की समुचित व्यवस्था की गयी है।

भारत में श्रम विधि का विकास

देश में श्रम विधि का उद्भव औद्योगीकरण के साथ हुआ। अठारहवीं शताब्दी में भारत केवल कृषि प्रधान देश ही नहीं रहा, अपितु एक अधिनिर्माता देश भी बन चुका था। परन्तु भारत में ब्रिटिश सरकार ने भारतीय अधिनिर्माताओं को सदैव निरुत्साहित किया। इसका कारण था कि ब्रिटेन के अधिनिर्माताओं को अधिकाधिक प्रोत्साहन देना और भारतवासियों को केवल इस योग्य बनाए रखना कि वे कच्चे माल का उत्पादन करते रहें। बीसवीं शताब्दी में राष्ट्रीय आन्दोलन ने एक नया रूप लिया और स्वदेशी मालों की सार्वजनिक माँग बढ़ गयी। 'स्वदेशी आन्दोलन' में भारत की जनता से स्पष्ट आग्रह किया गया कि वे विदेशी माल का बहिष्कार करें और स्वदेशी माल का प्रयोग करें।

इससे एक आर्थिक संकट उत्पन्न हो गया और इस संकट ने देश को औद्योगीकरण की एक प्रबल प्रेरणा दी। देश की परिस्थितियों के सर्वथा अनुकूल आर्थिक विकास एवं अर्थ-योजना के एक नये सिद्धान्त को प्रस्थापित करने का प्रयास किया गया।

भारत में सर्वप्रथम असम का रोपण उद्योग विधायी नियंत्रण के अधीन लाया गया। इस उद्योग में मजदूरों को नियुक्त करने और उनसे काम लेने का ढंग बहुत ही कठिनाई पूर्ण था। कर्मकारों की नियुक्तियाँ व्यावसायिक भर्ती करने वाले लोग किया करते थे और कर्मकारों को चाय-बागानों से बाहर जाने की अनुमति नहीं दी जाती थी। स्वतंत्र भारत में इन कमियों में सुधार की ओर ध्यान दिया गया और संविधान में कर्मकारों के हितों के संवर्धन और संरक्षण के लिए राज्य के विशेष कर्तव्य निर्दिष्ट किये गये। हमारे संविधान में समाज के सभी वर्गों को सामाजिक न्याय की व्यवस्था प्रदान की गयी है। श्रमिकों को सामाजिक न्याय एवं सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से बहुत से कानून बनाए गये तथा अधिनियमों में आवश्यक संशोधन किये गये।

भारत में श्रम के सम्बन्ध में कई विधियाँ बनाई गईं। इनमें से प्रत्येक विधि का उद्देश्य उद्योग के विकास और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करता रहा है। स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरान्त से विधि और लोक-सम्पत्ति दोनों ने कर्मकारों की दशा के सुधार का प्रबल समर्थन किया है। उद्योगपतियों को आज इस बात को अनुभव करना चाहिये कि उन्हें देश के संभ्रान्त नागरिकों के रूप में देश के भविष्य के लिए एक नया आदर्श देना चाहिए। साथ ही कर्मकारों और उनके संगठनों का भी यह कर्तव्य है कि वे पारस्परिक कार्यक्षमता में सुधार एवं वृद्धि करें तथा उत्पादन की दशा में अपना सक्रिय योगदान प्रदान करें जिससे अधिक लाभ हो और उद्योग को अधिक संवृद्ध किया जा सके ताकि मालिकों, कर्मकारों और व्यापक रूप से समाज को उसका आनुपातिक लाभ मिल सके।

आज के औद्योगिक उपक्रमों में कर्मकार की महत्वपूर्ण भूमिका हैं और उनके सहयोग, अच्छे काम, अनुशासन, प्रतिष्ठा और चरित्र के बिना उद्योग में प्रभावकारी परिणाम या लाभ नहीं प्राप्त हो सकेंगे। किसी भी उद्योग में यंत्रों का कितना ही कुशल समावेश क्यों न कर दिया गया हो, यदि मानवीय तत्व समुचित सहयोग नहीं करता है तो निश्चय ही उद्योग का संचालन किया जाना रुक जायेगा। इसलिये, उद्योग के लाभों में नियोजकों, कर्मकारों और समाज का अंश अवश्य ही होना चाहिये, जिसमें कर्मकारों का अंश निश्चय ही विशेष होना चाहिये, क्योंकि वे ही वास्तविक रूप में धन के उत्पादक हैं।

औद्योगिक न्याय निर्णयन

औद्योगिक न्याय निर्णयन का अंतिम उद्देश्य सामाजिक एवं आर्थिक न्याय है जिसके सामाजिक कल्याण, लोकहित तथा राज्य के नीति निदेशक सिद्धान्त मुख्य आधार हैं। औद्योगिक न्याय निर्णयन का प्रमुख कार्य औद्योगिक विवादों का समाधान ढूंढकर राज्य को सहायता देना है। अतः यह राज्य द्वारा निर्धारित आर्थिक एवं सामाजिक नीति पर निर्भर करता है। औद्योगिक शान्ति तथा आर्थिक न्याय, औद्योगिक न्याय निर्णयन के दो उद्देश्य हैं। औद्योगिक शान्ति से तात्पर्य है, उद्योग में शान्ति तथा सद्भावना को स्थापित करना जिससे श्रम एवं पूँजी के मध्य सामंजस्य कायम किया जा सके। औद्योगिक सामंजस्य उत्पादन में बढ़ोत्तरी कर राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को दृढ़ता प्रदान करता है। आर्थिक न्याय का तात्पर्य उचित तथा यथोचित आधार पर औद्योगिक शान्ति एवं सद्भावना को पुनर्स्थापित करने से है। सामाजिक और आर्थिक अन्याय ही श्रम के शोषण, आमदनी में असमानता, कुछ हाथों में धन संचयन, पूंजीवाद तथा वर्ग संघर्ष के कारण हैं। औद्योगिक न्याय निर्णयन के सम्बन्ध में तत्कालीन सामाजिक दर्शन को भी ध्यान में रखना आवश्यक है। औद्योगिक विवादों को सुलझाने के लिए क्या उचित है और क्या अनुचित है, को ध्यान में रखा जाता है। जैसे-जैसे समाज में सामाजिक चेतना जागृत एवं क्रियाशील होती है।

जैसे-जैसे राज्य की कल्याणकारी नीति विस्तृत होती है, जैसे-जैसे राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था उन्नति करती है तथा जैसे-जैसे सामूहिक सौदेबाजी का सिद्धान्त इस क्षेत्र में प्रवेश कर रहा है, औद्योगिक विवाद एक नया रूप धारण कर रहा है। औद्योगिक न्याय-निर्णयन का दायित्व है कि वह राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था को बढ़ावा दे। इसलिये यह आवश्यक है कि पंचाट श्रम नीति के प्रतिकूल न हो। अधिकतम आर्थिक कल्याण को ही अपना प्रमुख उद्देश्य मानने वाली नीति ही वास्तविक श्रम-नीति है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए आवश्यक है कि – (1) राष्ट्रीय आमदनी को बढ़ाया जाये, (2) राष्ट्रीय आमदनी को लोगों में बराबर-बराबर बाँटा जाये, और (3) इसे स्थिर होना चाहिये, अर्थात् अनियमित उतार-चढ़ाव से मुक्त होना चाहिये।

औद्योगिक न्याय निर्णयन के प्रमुख सिद्धान्त निम्नलिखित हैं –

- औद्योगिक न्याय निर्णयन का उद्देश्य सामाजिक तथा आर्थिक न्याय को प्राप्त करना है तथा सामाजिक एवं आर्थिक न्याय सामाजिक हितों पर आधारित है, अतः औद्योगिक न्याय निर्णयन के लिए आवश्यक है कि वह लोकहित को ध्यान में रखे।
- उद्योग में स्थायी शान्ति तभी कायम हो सकती है जब संघर्ष के वास्तविक कारणों को दूर करने का प्रयत्न किया जाये। उत्पादन के लिये श्रमिकों का पूर्ण सहयोग पाने के लिए दोनों प्रकार के, सामाजिक तथा आर्थिक न्याय आवश्यक है। सामाजिक न्याय के लिए आवश्यक है कि समान कार्य के लिए समान वेतन, पुरुष तथा स्त्री दोनो को बराबर वेतन तथा अवसर की बराबरी इत्यादि सुनिश्चित की जाये। न्याय के लिये समता के सिद्धान्तों को स्वीकारना आवश्यक है। औद्योगिक न्याय-निर्णयन में नियोजक के दावे को जो संविदा की स्वतंत्रता पर आधारित है, नियोजित के दावे के साथ जो सामाजिक न्याय पर आधारित है, समायोजित करना होता है। परस्पर विरोधी दावों को समायोजित करना आसान कार्य नहीं है। यदि कोई औद्योगिक न्याय-निर्णयन सामान्य सिद्धान्त प्रतिपादित करता है तो वे सिद्धान्त भविष्य में होने वाले विवादों में उचित नहीं प्रतीत होते। अतएव इस प्रकार के सिद्धान्तों को प्रतिपादित नहीं करना चाहिए। मैसूर राज्य बनाम वर्कर्स ऑफ गोल्ड माइन के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा था, 'सामाजिक न्याय देने के प्रयास में औद्योगिक न्याय-निर्णयन को नियोजक तथा कर्मकारों के परस्पर विरोधी दावों को समायोजित करना आवश्यक है और इस उद्देश्य को प्रत्येक प्रश्न के तथ्य तथा दशाओं को जो उनकी उत्पत्ति के समय मौजूद थीं, को ध्यान में रखकर ही प्राप्त किया जा सकता है।
- यदि न्यायाधिकरण के सम्मुख कोई ऐसा विवाद प्रस्तुत है तथा न्यायाधिकरण ऐसा सोचता है कि इस विवाद को किसी विशेषज्ञ की राय लेकर अच्छी प्रकार से निपटाया जा सकता है तो उसे विशेषज्ञ की राय अवश्य ले लेनी चाहिए। यद्यपि अन्तिम निर्णय न्यायाधिकरण के हाथ में होता है।
- यद्यपि यह सत्य है कि औद्योगिक न्यायाधिकरण न तो सामाजिक और न ही आर्थिक विधानांग ही हैं परन्तु यह कहना भी सत्य नहीं है कि पंचाट के सामाजिक तथा आर्थिक प्रभाव से न्यायाधिकरण का कोई सम्बन्ध नहीं है। यदि कोई निर्णय बिना उसके सामाजिक तथा आर्थिक प्रभाव को ध्यान में रख दिया जाता है तो उसका प्रभाव शीघ्र ही समाप्त हो जाता है। ऐसा निर्णय स्थायी प्रभाव नहीं छोड़ पाता है।
- इसके लिए आवश्यक है कि न्यायाधिकरण सभी आवश्यक साक्ष्यों को अपने पास एकत्रित करें तथा प्रत्येक साक्ष्य को प्रतिपरीक्षण द्वारा सत्य साबित करने का अवसर दें।
- निर्वाचक या निर्णायक का यह कर्तव्य है कि वह ऐसा निर्णय दे जो दोनों पक्षों को स्वीकार्य हो तथा जो कार्य योग्य हो। जहाँ तक सम्भव हो सके, समझौते पर बल देना चाहिये।
- औद्योगिक विवादों को सुलझाते समय न्यायाधिकरण को शैक्षिक विधिक प्रश्नों द्वारा अनुचित रूप से प्रभावित नहीं होना चाहिये। जहाँ तक सम्भव हो सके उन्हें प्रत्येक विवाद के तथ्य तथा परिस्थितियों को ध्यान में रखकर उसके गुण तथा दोष का निर्णय करना चाहिये।

कारखाना अधिनियम, 1948

19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में भारत में कारखाना उद्योग की तीव्रतर वृद्धि हुई है। प्रथम कारखाना अधिनियम सन् 1881 ई. में अधिनियमित हुआ। उस समय से बहुत से अवसरों पर यह अधिनियम संशोधित भी किया गया। सन् 1932 में कारखाना अधिनियम में आमूल परिवर्तन किया गया और कारखाना अधिनियम, 1934 पूर्ववर्ती कारखाना विषयक विधि के स्थान पर अधिनियमित हुआ। इस अधिनियम के आमूल परिवर्तन की पुनः आवश्यकता का अनुभव किया गया, जिससे कि लघु औद्योगिक संस्थापनों की बढ़ती हुई संख्या को समुचित विधायी संरक्षण प्रदान किया जा सके।

फलतः कारखाना अधिनियम, 1948 अधिनियमित किया गया। इस अधिनियम में कारखानों में श्रमिकों से सम्बन्धित विधि का संकलन एवं संशोधन किया गया। यह अधिनियम संविधान सभा द्वारा 28 अगस्त, 1948 ई. को पारित हुआ। इस पर भारत के गवर्नर जनरल की स्वीकृति सितम्बर, 1948 ई. को प्राप्त हुई और यह अधिनियम 1 अप्रैल, 1949 ई. से लागू हुआ।

अधिनियम का क्षेत्र विस्तार–

कारखाना अधिनियम, 1948 जम्मू और कश्मीर राज्य को छोड़कर शेष सम्पूर्ण भारत में विस्तारित है। यह एक सामाजिक विधि है जिसका उद्देश्य सामाजिक सुधार करना है और इसकी व्याख्या इसमें प्रयुक्त भाषा को खण्डित किये बिना विधायी उद्देश्यों की पूर्ति के लिये उदारवादी दृष्टिकोण से की जानी चाहिये।

निर्वचन – कारखाना अधिनियम, 1948 की धारा 2 में अधिनियम में प्रयुक्त निम्नलिखित शब्दों और अभिव्यक्तियों की परिभाषा दी गई है। जब तक कि सम्बन्धित विषय में कोई प्रतिकूल बात न हो, तब तक निम्नलिखित का अर्थ इस प्रकार होगा –

वयस्क – ''वयस्क'' से एक ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जिसने 18 वर्ष की आयु पूरी कर ली है।

किशोर – ''किशोर'' से एक ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जिसने 15 वर्ष की अवस्था प्राप्त कर ली है, किन्तु 18 वर्ष का नहीं हुआ है।

बालक – ''बालक'' से एक ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जिसने 15 वर्ष की आयु पूरी नहीं की है।

युवा व्यक्ति – ''युवा व्यक्ति'' से एक ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जो कि या तो बालक या किशोर है।

दिन – ''दिन'' से मध्य रात्रि से आरम्भ होने वाले 24 घण्टों की अवधि अभिप्रेत है।

सप्ताह – ''सप्ताह'' से सात दिनों की ऐसी अवधि अभिप्रेत है जो कि शनिवार की रात्रि में अर्द्धरात्रि से शुरू होती हो या किसी रात्रि के मध्य से आरम्भ होती हो जैसा कि विशिष्ट क्षेत्र में कारखानों के मुख्य निरीक्षक द्वारा लिखित रूप से अनुमोदित हो।

शक्ति – ''शक्ति'' से विद्युत ऊर्जा या ऊर्जा का कोई अन्य रूप अभिप्रेत है जिसका संचार यंत्र द्वारा किया जाता है जिसका उत्पादन मानव या पशु द्वारा नहीं किया जाता है।

मूलगति उत्पादक – 'मूल गति उत्पादक' से कोई ऐसा इंजन, मोटर या अन्य उपकरण जो कि शक्ति उत्पादन करता अथवा अन्य प्रकार से शक्ति प्रदान करता है, अभिप्रेत है।

ट्रान्समिशन मशीनरी – 'ट्रांसमिशन मशीनरी' से कोई शैफ्ट, चक्र, ड्रम, पुली, सिस्टम, कपलिंग क्लच, ड्राइविंग बेल्ट या अन्य यन्त्र या युक्ति अभिप्रेत है जिससे कि मूल गति उत्पादक की गति पारेषित की जाती है या वह गति किसी मशीनरी या यंत्र द्वारा धारण की जाती है।

मशीनरी – 'मशीनरी' के अंतर्गत मूल गति उत्पादक, ट्रांसमिशन मशीनरी और ऐसे अन्य यंत्र सम्मिलित हैं जिनके द्वारा शक्ति का उत्पादन, परिवर्तन, पारेषण का प्रयोग किया जाता है।

विनिर्माण प्रक्रिया – ''विनिर्माण प्रक्रिया'' से निम्नलिखित के सम्बन्ध में कोई प्रक्रिया अभिप्रेत है।

(i) किसी वस्तु या तत्व को बनाने, पलटने, मरम्मत करने, सजाने, फिनशिंग, पैकिंग, सीलिंग, धोने, सफाई करने, तोड़कर अलग करने, गिराने या अन्यथा रूप में अनुकूलित करने का काम जिसका उद्देश्य उस वस्तु या तत्व को प्रयोग में लाने, विक्रय करने, निर्यात करने, अदायगी करने या व्ययनित करने का हो, या

(ii) तेल या पानी के नाली के बहाव या अन्य वस्तु को पम्प करने की प्रक्रिया,

(iii) विद्युत शक्ति के उत्पादन, रूपान्तरण या पारेषण करने का काम, या

(iv) मुद्रण के लिये टाइपों को कम्पोज करने, लेटर प्रेस द्वारा प्रिंटिंग करने, अश्ममुद्रण, प्रकाशोत्कीर्ण या इसी प्रकार की अन्य प्रक्रिया या बुक बाइंडिंग का काम, या

(v) निर्माण, पुनर्निर्माण, मरम्मत, फिर से फिटिंग, फिनिशिंग या पोतों या बेड़ों को तोड़कर अलग करने का काम, या

(vi) किसी सामग्री को शीतालय में सुरक्षित रखने या एकत्रित करने की प्रक्रिया।

कर्मकार – 'कर्मकार' से ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जो किसी विनिर्माण प्रक्रिया में या मशीनरी अथवा विनिर्माण प्रक्रिया के लिए प्रयुक्त परिसर के किसी भाग की सफाई में या विनिर्माण प्रक्रिया अथवा विनिर्माण प्रक्रियाधीन विषय-वस्तु के प्रासंगिक या उससे सम्बन्धित किसी अन्य प्रकार के काम में चाहे सीधे या किसी एजेंसी द्वारा (ठेकेदार समेत) या उसके मार्फत मुख्य नियोजक के ज्ञान या बिना ज्ञान के और चाहे मजदूरी या उसके बिना नियोजित हो। परन्तु भारतीय संघ की सशस्त्र सेनाओं का कोई सदस्य इस परिभाषा में सम्मिलित नहीं है।

कर्मकार की परिभाषा में ऐसे कर्मचारी अपवर्जित नहीं किये गये हैं जिन्हें कि एकमात्र लिपिकीय कार्य करने को दिया गया है, शर्त यह है कि उन्हें अन्यथा रूप में ''कर्मकार'' शब्द की परिभाषा के अंतर्गत आना चाहिये। इस धारा के अंतर्गत किसी व्यक्ति को कर्मकार मानने के सम्बन्ध में यह अनिवार्य नहीं है कि वह व्यक्ति मजदूरी ही प्राप्त कर रहा हो।

दिन के समय का निर्देशन–

अधिनियम की धारा 3 में उपबन्धित है कि इस अधिनियम में दिवस का समय भारतीय स्टैंन्डर्ड टाइम के अनुसार माना जायेगा जो कि ग्रीनविच मीनटाइम से साढ़े पाँच घण्टे आगे रहता है। किन्तु ऐसे क्षेत्र में जहाँ कि भारतीय स्टैन्डर्ड टाइम का पालन नहीं किया जाता, वहां राज्य सरकार निम्नलिखित के सम्बन्ध में नियम बना सकती है –

- उस क्षेत्र का उल्लेख करने के सम्बन्ध में,
- उस क्षेत्र में अपनाया गया साधारण स्थानीय मीनटाइम और उसकी परिभाषा, और
- उस क्षेत्र में स्थित सभी या किसी कारखाने में ऐसे समय के पालन की अनुमति देने के विषय में।

विभिन्न विभागों को पृथक् कारखाना अथवा दो या दो से अधिक कारखानों को एक कारखाना घोषित करने की शक्ति –

धारा 4 में किसी अधिभोगी द्वारा इस निमित्त आवेदन किये जाने पर या राज्य सरकार अपने आप लिखित आदेश और ऐसी शर्तों के अधीन जैसा वह उचित समझे, द्वारा निदेशित कर सकती है कि इस अधिनियम के सभी या किसी प्रयोजनों के निमित्त आवेदन में उल्लिखित अधिभोगी के कारखाने के विभिन्न विभागों या शाखाओं को भिन्न-भिन्न कारखानों के रूप में माना जायेगा, या यह कि अधिभोगी के दो या दो से अधिक कारखानों को जिनका कि उल्लेख आवेदन में किया गया हो, एक कारखाने के रूप में माना जायेगा।

परन्तु यह कि राज्य सरकार स्वप्रेरणा पर इस धारा के अंतर्गत तब तक कोई आदेश जारी नहीं करेगी जब तक कि अधिष्ठाता को सुने जाने का अवसर न दे दिया जाय।

लोक आपात् की अवधि में छूट प्रदान करने की शक्ति – धारा 5 में लोक आपात् के किसी प्रकरण में राज्य सरकार सरकारी राजपत्र में अधिसूचना के द्वारा किसी कारखाने, या कारखाने के वर्ग या किसी प्रकार के कारखानों की धारा 67 को छोड़कर अन्य किसी भी धारा के प्रवर्तन से ऐसी अवधि के लिए छूट प्रदान कर सकती है और ऐसी शर्तें के अधीन यह छूट प्रदान की जा सकती है जैसा कि वह उचित समझे। किन्तु इस प्रकार की कोई भी अधिसूचना एक समय में तीन मास से अधिक की अवधि के लिए विज्ञापित नहीं की जायेगी।

स्पष्टीकरण – इस धारा के उद्देश्य हेतु 'लोक-आपात्' का तात्पर्य एक गम्भीर आपात् से जिसके द्वारा भारतवर्ष या उसके किसी हिस्से की सुरक्षा को चाहे युद्ध या बाहरी आक्रमण या आन्तरिक उथल-पुथल के कारण खतरा पैदा हो जाता है।

कारखानों का अनुमोदन, लाइसेन्सीकरण और रजिस्ट्रेशन–

अधिनियम की धारा 6 सरकार को नियम बनाने की शक्ति प्रदान करती है। इस धारा के अनुसार राज्य सरकार निम्नलिखित के बारे में नियम बना सकती है –

- ■ इस अधिनियम के उद्देश्य हेतु किसी वर्ग या किसी प्रकार के अधिष्ठानों की योजनाओं को मुख्य निरीक्षक या राज्य सरकार के समक्ष प्रस्तुत करने के सम्बन्ध में।
- ■ जिस स्थान पर कारखाने को स्थापित किया जाना अपेक्षित है उसके लिए स्थान (site) के लिये राज्य सरकार या मुख्य निरीक्षक की पूर्व-अनुमति प्राप्त करने के सम्बन्ध में, और किसी कारखाने या कारखानों के वर्ग या प्रकार के कारखानों के निर्माण या विस्तार के लिये ऐसी पूर्व-अनुमति प्राप्त करने के सम्बन्ध में;
- ■ ऐसी अनुमति के लिये आवेदनों या निर्माण के लिये योजनाओं और नक्शों आदि पर विचार करने के लिए उनके समर्पित किये जाने के सम्बन्ध में वांछनीयता के प्रकरण में;
- ■ ऐसी योजनाओं और नक्शों आदि के प्रकार के सम्बन्ध में विहित करने और इस बात का उल्लेख करने के सम्बन्ध में कि उनका प्रमाणीकरण कौन करेगा;
- ■ कारखानों या कारखानों के किसी वर्ग या कारखानों के किसी प्रकार के रजिस्ट्रेशन और लाइसेन्सिंग की अपेक्षा करने के सम्बन्ध में इस प्रकार के रजिस्ट्रेशन और लाइसेन्सिंग तथा ऐसे लाइसेन्सों के नवीकरण के लिए प्रदेय फीस विहित करने के सम्बन्ध में;
- ■ इस बात की अपेक्षा करने के सम्बन्ध में जब तक कि धारा 7 यथोल्लिखित नोटिस नहीं दी जायेगी तब तक न तो लाइसेन्स स्वीकृत किया जायेगा और न नवीनीकृत किया जायेगा।

यदि उपधारा (1) के खण्ड (क) में यथोल्लिखित अनुमति के लिये दिये गये आवेदन, उस उपधारा के खण्ड (ख) के द्वारा बनाये गये नियमों के अनुसार अपेक्षित योजनाओं और नक्शों आदि के सहित रजिस्टर्ड पोस्ट द्वारा राज्य सरकार और मुख्य निरीक्षक के पास भेजा जाता है, और यदि इस प्रकार से भेजने की तिथि से तीन मास के भीतर आदेश की संसूचना आवेदन को नहीं दी जाती है तो कथित आवेदन में जिस बात के लिये अनुमति की याचना की गई है, उसके सम्बन्ध में मान लिया जायेगा कि वह अनुमति दे दी गई है।

जहाँ कि राज्य-सरकार या मुख्य निरीक्षक निर्माण के स्थल, निर्माण या कारखाने के विस्तार के लिये अनुमति देने से इनकार कर देता है, या किसी कारखाने के रजिस्ट्रेशन या लाइसेन्सीकरण के लिये अनुमति नहीं देता है, वहाँ आवेदक इस प्रकार की अस्वीकृति से एक मास के भीतर, यदि निर्णय राज्य सरकार द्वारा दिया गया है तो केंद्रीय सरकार के पास और अन्य प्रकरणों में राज्य-सरकार के पास अपील कर सकता है।

केवल किसी संयंत्र (plant) या मशीनरी को प्रतिस्थापित करने अथवा ऐसी सीमाओं के भीतर जो विहित हों, कोई अतिरिक्त संयंत्र या मशीनरी लगाने से ही इस धारा के अर्थ में कारखाने का विस्तार हुआ नहीं समझा जायेगा यदि ऐसा प्रतिस्थापन या जोड़ संयन्त्र या मशीनरी के चारों तरफ सुरक्षापूर्वक कार्य करने के लिये आवश्यक न्यूनतम स्पष्ट स्थान को कम नहीं करता है या स्वास्थ्य के लिए हानिकारक भाप, गर्मी, धूल या धुयें के विस्तार एवं उद्गार के फलस्वरूप आसपास के वातावरण को बुरी तरह प्रभावित नहीं करता है।

यह धारा लाइसेन्सिंग अधिकारी पर पंजीकरण एवं लाइसेन्स जारी करने के लिये आवेदन पर विचार करने हेतु एक सांविधिक दायित्व आरोपित करती है। इस अधिनियम एवं इसके तहत बनाये गये नियमों की अपेक्षाओं की पूर्ति हो जाने पर लाइसेन्सिंग अधिकारी, लाइसेन्स जारी करने के लिए बाध्य है। यदि प्रमुख निरीक्षक पंजीकरण प्रदान करने से इन्कार कर देता है या लाइसेन्स जारी करने से मना कर देता है तो सरकार के यहाँ अपील की जा सकती है। किसी अपील प्राधिकारी के निर्देश पर लाइसेन्सिंग अधिकारी न तो रजिस्ट्रेशन करने और न लाइसेन्स जारी करने से इन्कार कर सकता है। ऐसे निर्देश अवैध होते हैं।

अधिभोगी द्वारा नोटिस का दिया जाना – धारा 7 में अधिभोगी जबकि किसी परिसर को एक कारखाने के रूप में प्रयोग लाने लगे या अधिभोगी के रूप में कार्य करने लगे, इसके कम-से-कम 15 दिन पूर्व उसे लिखित रूप में मुख्य निरीक्षक के पास निम्नलिखित सूचना भेज देनी चाहिये –

- ■ कारखाना का नाम और अवस्थिति
- ■ अधिभोगी का नाम और पता
- ■ धारा 93 में यथोल्लिखित परिसर या भवन (जिसमें उसकी सीमायें सम्मिलित होंगी) के स्वामी का नाम और पता
- ■ वह पता जिस पर कि कारखाना से सम्बन्धित सूचनाओं को भेजा जाना चाहिये
- ■ उस विनिर्माण प्रक्रिया का स्वरूप जो –
  - (i) इस अधिनियम के प्रारम्भ होने की तारीख को विद्यमान कारखानों की दशा में पिछले बारह मास के दौरान कारखाने में चलाई गई हो, और
  - (ii) सभी अन्य कारखानों की दशा में अगले बारह मासों के दौरान कारखाने में चलाई जाने वाली हो,
- ■ कुल रेटेड हार्स पावर जो कि किसी कारखाना में लगाई गई या लगाई जानी है जिसमें कि किसी भिन्न स्टैण्डबाई प्लाण्ट की रेटेड हार्स पावर सम्मिलित नहीं होगी

■ इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए कारखाने के प्रबन्धक का नाम

■ कारखाने में नियोजित होने वाले सम्भावित कर्मचारियों की संख्या

■ इस अधिनियम के लागू होने की तिथि को अस्तित्व में रहे कारखाने के प्रकरण में पिछले 12 मास में प्रतिदिन नियोजित कर्मकारों और औसत संख्या

■ अन्य ऐसे विवरण जिन्हें कि इस सम्बन्ध में विहित किया जाय।

(2) ऐसे सभी संस्थापनों के प्रकरण में जो कि पहली बार इस अधिनियम की क्षेत्र सीमा के अन्तर्गत आते हैं, उन संस्थानों के अधिभोगी एक लिखित नोटिस इस अधिनियम के लागू होने की तिथि के 30 दिन के भीतर मुख्य निरीक्षक के पास भेजेंगे जिसमें उपधारा (1) में उल्लिखित सभी विवरण अंकित रहेगा।

(3) किसी ऐसे कारखाने के विनिर्माण-कार्य आरम्भ करने के पहले, जो कि ऐसे विनिर्माण प्रक्रिया में संलग्न है जिसमें कि वर्ष में साधारणतया 180 दिन से कम हुआ है, या उससे कम दिन काम होता है, उनके प्रकरण में अधिभोगी ऐसा काम शुरू होने से कम-से-कम 30 दिन पूर्व मुख्य निरीक्षक के पास एक लिखित नोटिस भेजेगा जिसमें उपधारा (1) में यथोलिखित विवरण रहेगा।

(4) जब कभी कोई नया प्रबन्धक नियुक्त किया जाता है तो उसे कार्यभार ग्रहण करने की तिथि से सात दिनों के भीतर अपने कार्य-भार ग्रहण करने की नोटिस निरीक्षक को लिखित रूप में भेजनी होगी, जिसकी एक प्रति मुख्य निरीक्षक के पास भी भेजी जायेगी।

(5) किसी ऐसी अवधि में कि कारखाने का कोई भी व्यक्ति प्रबन्धक के नाम से नियुक्त नहीं किया गया है, या जिस अवधि में प्रबन्धक के रूप में नामित व्यक्ति अपने पद का कार्यभार नहीं ग्रहण करता, या जिस अवधि में ऐसा कोई व्यक्ति नहीं पाया जाता है उस अवधि के लिए इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए स्वयं अधिभोगी ही प्रबन्धक के रूप में माना जायेगा।

महत्वपूर्ण प्रावधान– इस कानून के अंतर्गत अनेक महत्वपूर्ण प्रावधान दिए गए हैं। महत्वपूर्ण प्रावधानों को निम्न अध्यायों में बाँटा गया है–

1. स्वास्थ्य संबंधी प्रावधान (Chapter on health) – (अध्याय–III)
2. सुरक्षा संबंधी प्रावधान (Chapter on safety) – अध्याय–IV, IVA
3. कल्याण संबंधी प्रावधान (Chapter on Welfare) – अध्याय–V
4. कार्य के घंटों से संबंधी प्रावधान (Chapter on hours of work) – अध्याय–VI
5. अल्पवय श्रमिकों की नियुक्ति से संबंधी प्रावधान (Chapter on Employment of Young Persons and Children) अध्याय–VII
6. वार्षिक संवेतन छुट्टी (Chapter on Leave with Wage) अध्याय–VIII

(1) स्वास्थ्य संबंधी प्रावधान– कारखाना अधिनियम 1948 के अध्याय–III में धारा 11-20 तक 'स्वास्थ्य संबंधी प्रावधान' दिए गए है। जिसके दो प्रधान उद्देश्य हैं–

1. मजदूरों के स्वास्थ्य की रक्षा करना
2. एक स्वच्छ वातावरण बनाने की कोशिश करना

इन्हीं दो उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए इस कानून के अंतर्गत 10 महत्वपूर्ण प्रावधान दिए गए हैं–

1. सफाई
2. कचरे तथा वहिस्राव का व्ययन
3. संवातन और तापमान
4. धूल एवं धुँआ
5. कृत्रिम नमीकरण
6. अतिभीड़
7. प्रकाश
8. पीने का जल
9. शौचालय एवं मूत्रालय
10. थूकदान

(2) सुरक्षा संबंधी प्रावधान– कारखाना अधिनियम, 1948 के अध्याय–IV, IVA में धारा 21-41 तक सुरक्षा संबंधी प्रावधानों का उल्लेख किया गया है। इस अध्याय के दो महत्वपूर्ण उद्देश्य है–

1. कारखानों में सुरक्षात्मकपूर्ण कार्य की स्थिति उत्पन्न करना
2. कारखानों में दुर्घटनाओं को रोकना

वैसे तो इस अध्याय के अंतर्गत बहुत से प्रावधान दिए गए हैं लेकिन इसके महत्वपूर्ण प्रावधान इस प्रकार हैं–

1. मशीनों की घेराबंदी (Fericing of Machinery)
2. रूई-धुनाई के नजदीक महिलाओं एवं बच्चों के नियोजन पर प्रतिबंध (Prohibition of Employment of Women and Children Near Cotton Operation Place)
3. उत्तोलक एवं भारवाहक का अच्छे धातु का बना होना
4. सतह सीढ़ी तथा आने-जाने का साफ रास्ता
5. अत्यधिक भार न उठाने के नियम के लिए
6. आँखों की सुरक्षा संबंधी उपकरणों की उपलब्धता

(3) कल्याण संबंधी प्रावधान– कारखाना अधिनियम 1948 के अध्याय–V में धारा 42-50 तक कल्याण से संबंधित प्रावधान दिए गए हैं। ऐसी सुविधाएँ जिसे प्रदान करने से मजदूरों का शारीरिक और मानसिक विकास हो और जिसका अच्छा प्रभाव मजदूरों की कार्यकुशलता पर पड़े तो इस प्रकार की सुविधा को कल्याणकारी सुविधा कहा जाता है।

ये कल्याणकारी सुविधाएँ दो प्रकार की होती है–

1. कानूनी कल्याणकारी सुविधाएँ (उदाहरण–कारखाना अधिनियम 1948 के द्वारा प्रदान सुविधाएँ–स्नान गृह की सुविधा, कपड़ों को रखने व सुखाने की सुविधा, प्राथमिक उपचार की सुविधा इत्यादि)
2. ऐच्छिक कल्याणकारी सुविधाएँ (उदाहरण–मनोरंजन की सुविधा, व्यायाम संबंधित सुविधा इत्यादि)

(4) प्राथमिक उपचार एवं सामग्री की सुविधा–इसके अंतर्गत कहा गया है कि–

(a) प्रत्येक कारखाने में दुर्घटना होने की स्थिति में प्रथम उपचार के उद्देश्य से First AID Boxes रखे जाएगें।

(b) 150 मजदूरों पर एक First AID Box रखा जाएगा।

(c) राज्य सरकार आवश्यक नियम बनाकर यह निर्धारित करेगी इसमें क्या-क्या और कौन-कौन सी सामग्री रखी जाएगा।

(d) इस First AID Boxes का उपयोग करने के लिए कुछ मजदूरों को इसका प्रशिक्षण दिया जाएगा, वे ही इसकी देखभाल और प्रयोग करेंगे।

(e) 500 से अधिक श्रमिक वाले कारखानों में मालिक एक Ambulance Room की सुविधा प्रदान करेगा। राज्य सरकार आवश्यक नियम बनाकर यह निर्धारित करेगी कि Ambulence Room के साथ कितने Medical और Para Medical स्टाफ रखे जायेगें।

(5) आश्रय, आराम तथा जलपानगृह की सुविधा– जहाँ कम से कम 150 श्रमिक कार्य कर रहे हो उस कारखाना के मालिक एक ऐसे स्थान की सुविधा प्रदान करेगा जहाँ मजदूर मध्यान्तर के समय आकर थोड़ी देर बैठकर आराम तथा घर से लाए भोजन को खा सके। यह स्थान स्वच्छ, रोशनी और हवादार होनी चाहिए। इसमें बैठने की उचित सुविधा होनी चाहिए। इसमें पानी पीने की उचित सुविधा होनी चाहिए। जिस कारण से इस प्रकार की सुविधा प्रदान की गई है। यदि कारखाने के श्रमिक उस स्थान से बाहर बैठकर घर से लाए भोजन को करेंगे तो वह दंडनीय अपराध माना जाएगा।

(6) कैंटीन–

(a) ऐसे सभी कारखानें जहाँ कम से कम 250 श्रमिक कार्य कर रहे हो, वहाँ मालिक एक कैंटीन की सुविधा प्रदान करेगा।

(b) राज्य सरकार आवश्यक कानून बनाकर मालिक को यह आदेश दे सकती है कि मालिक कैंटीन के लिए फर्नीचर, बर्तन, कप-प्लेट तथा बिजली की सुविधा प्रदान करें।

(c) जिस कारखानें में कैंटीन की सुविधा प्रदान की जाएगी वहाँ मालिक एक कैंटीन कमेटी की स्थापना करेगा जिसमें मालिक और मजदूरों के बराबर प्रतिनिधि रहेंगे। यही कमेटी कारखाने के कैंटीन के बारे में महत्वपूर्ण बाते करेगा।

कारखाना अधिनियम में किए गये संशोधन

कारखाना की परिभाषा में न्यूनतम कर्मकारों की सीमा को बढ़ाकर दोगुना किये जाने के सम्बन्ध में :

	पहले (संशोधन के पहले)	अब (संशोधन के बाद)
	2(ङ) कारखाना से अपनी प्रसीमाओं सहित कोई ऐसा परिसर अभिप्रेत है जिसमें-	2(ङ) कारखाना से अपनी प्रसीमाओं सहित कोई ऐसा परिसर अभिप्रेत है जिसमें–
(i)	दस या अधिक कर्मकार काम कर रहे हैं या पूर्णवर्ती मास के किसी दिन काम कर रहे थे, और जिसके किसी भाग में विनिर्माण प्रक्रिया शक्ति की सहायता से की जा रहीं है, या आमतौर से इस तरह की जाती है, या	20 या अधिक कर्मकार कम कर रहे या पूर्णवर्ती मास के किसी दिन काम कर रहे थे, और जिसके किसी भाग में विनिर्माण प्रक्रिया शक्ति की सहायता से की जा रही है या आमतौर से इस तरह की जाती है, या
(ii)	बीस या अधिक कर्मकार काम कर रहे है या पूर्ववर्ती बारह मास से किसी दिन काम कर रहे थे, और जिसके किसी भाग में विनिर्माण प्रक्रिया शक्ति की सहायता के बिना की जा रही है, या आमतौर से ऐसे की जाती है।	चालीस या अधिक कर्मकार काम कर रहे है या पूर्ववर्ती बारह मास के किसी दिन काम रहे थे, और जिसके किसी भाग में विनिर्माण प्रक्रिया शक्ति की सहायता के बिना की जा रही है या आमतौर से ऐसे की जाती हैः

• एक त्रैमास में ओवरटाइम की सीमा 50 घंटों से बढ़ाकर 100 घंटों किये जाने के सम्बन्ध में –

पहले	अब
64(4)(iv) अतिकाल के घंटों की कुल संख्या किसी एक तिमाही के लिए पचास से अधिक नहीं होगी।	64(4)(iv) अतिकाल के घंटों की कुल संख्या किसी एक तिमाही के लिए सौ से अधिक नहीं होगी।

• एक त्रैमास में ओवरटाइम की सीमा 75 घंटों से बढ़ाकर 100 घंटों किये जाने के सम्बन्ध में :

पहले	अब
65(3)(iv) किसी कार्मकार को लगतार सात दिन से अधिक अतिकाल काम करने के लिए अनुज्ञात नहीं किया जाएगा और एक तिमाही में अतिकाल काम करने के घंटों की कुल संख्या 75 से अधिक नहीं होगी।	65(3)(iv) किसी भी कर्मकार को लगातार 7 दिन से अधिक अतिकाल काम करने के लिए अनुज्ञात नहीं किया जाएगा और एक तिमाही में अतिकाल काम करने के घंटों की कुल संख्या सौ से अधिक नही होगी।

• महिलाओं से रात में कार्य कराने के सम्बन्ध में :

66 (ख) पहले	66 (ख) अब
किसी कारखाने में किसी स्त्री से 6 बजे प्रातः और 7 बजे सायं के बीच के घंटों के अलावा किसी और समय पर काम करने की अपेक्षा नहीं की जाएगी या उसे काम करने की अनुज्ञा नहीं दी जाएगी : परन्तु राज्य सरकार (किसी कारखाने या कारखानों के समूह या वर्ग या प्रकार के कारखानों) के बारे में खण्ड (ख) में अधिकथित सीमाओं में फेरफार शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा कर सकेगी। किन्तु इस प्रकार की ऐसी फेरफार 10 बजे सायं और 5 बजे रात के बीच के घंटों में किसी स्त्री के नियोजन को प्राणिकृत न करेंगी।	किसी कारखाने में किसी स्त्री से 6 बजे प्रातः और 7 बजे सायं के बीच के घंटों के अलावा किसी और समय पर काम करने की अपेक्षा नहीं की जाएगी या उसे काम करने की अनुज्ञा नहीं दी जाएगी : परन्तु राज्य सरकार (किसी कारखाने या कारखानों के समूह या वर्ग या प्रकार के कारखानों) के बारे में खण्ड (ख) में अधिकथित सीमाओं में फेरफार शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा कर सकेगी किन्तु, इस प्रकार की ऐसी फेरफार 7 बजे सायं और अगले दिन 6 बजे प्रातः के बीच के घंटों में किसी भी स्त्री के नियोजन के लिए की जा सकेगी।

औद्योगिक नियोजन (स्थायी आदेश) अधिनियम, 1946

हमारे देश में स्थायी आदेश के अभाव के कारण विभिन्न संस्थापनों के प्रबन्धकों और कर्मकारों के मध्य संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हुआ करती है। इस अधिनियम के पारित किये जाने के पहले नियोजन की शर्तें अनुबंधों द्वारा नियन्त्रित होती थीं। ये अनुबंध प्रत्यक्ष और विवक्षित हो सकती थीं तथा विभिन्न औद्योगिक संस्थानों में प्रबन्धकों और कर्मचारियों के बीच में सम्पन्न की जाती थीं। उनके स्वरूप में कोई समानता नहीं होती थी।

केन्द्रीय सरकार द्वारा औद्योगिक नियोजन (स्थायी आदेश) अधिनियम, 1946 पास किया गया। अब इस अधिनियम से आवृत्त होने वाले सभी नियोजकों के लिए यह अनिवार्य हो गया है कि वे अपने अधीन नियोजनों की शर्तों और सेवा-दशाओं को सुनिश्चित करें। इसके साथ यह भी आवश्यक है कि उन शर्तों और सेवा-दशाओं की जानकारी कर्मकारों को भी करा दी जानी चाहिये जिनके अन्तर्गत उन्हें नियोजन प्रदान किया गया है। इस अधिनियम का प्रयोजन औद्योगिक संस्थानों में नियोजित किये गये कर्मकारों की भर्ती, उन्हें काम से अलग किये जाने, अनुशासनात्मक कार्यवाही, छुट्टियों आदि की शर्तों और दशाओं आदि को विनियमित करने का है। इस अधिनियम ने उसी श्रेणी के ऐसे अन्य कर्मकारों के नियोजनों के सम्बन्ध में सेवा-दशाओं और शर्तों में समरूपता स्थापित कर दी है, जो कि समान या एक ही प्रकार के कार्य किसी औद्योगिक संस्थापन में कर रहे हैं।

धारा 1. अधिनियम का प्रवर्तन–स्थायी आदेश का उद्देश्य दोनों पक्षकारों को यह स्पष्ट कर देता है कि किन निर्बन्धनों और शर्तों पर कर्मचारी कार्य करने का समर्पण कर रहे हैं और किन शर्तों पर नियोजक उन्हें कार्यों में लगाना चाहते हैं।

यह अधिनियम अग्रलिखित प्रकार के औद्योगिक संस्थानों में लागू हैं–

- ■ जो कि जम्मू और कश्मीर राज्य को छोड़कर भारत संघ में कहीं भी स्थित हों,
- ■ जिनमें 100 या अधिक कर्मकारों को नियोजित किया गया है,
- ■ जिनमें कि पूर्ववर्ती बारह महीनों के किसी भी दिन 100 या अधिक कर्मचारियों को नियोजित किया गया हो।

इस अधिनियम का प्रवर्तन निम्नलिखित संस्थापनों में नहीं किया जाता है–

(1) कोई ऐसा उद्योग जिसके सम्बन्ध में बम्बई औद्योगिक सम्बन्ध अधिनियम, 1946 के अध्याय 7 के उपबन्ध लागू होते हैं;

(2) कोई ऐसा औद्योगिक संस्थापन जिसके सम्बन्ध में मध्य-प्रदेश औद्योगिक नियोजन (स्थायी आदेश) अधिनियम, 1961 के उपबन्ध लागू होते हैं।

ऐसी परिस्थिति में जबकि नियोजक स्थायी आदेशों के अन्तर्गत बीमारी अवकाश प्रदान करने के विकल्प का चुनाव करता है और इस अधिनियम की प्रस्तावना के अनुसार वस्तुतः सेवा की शर्तों का एक ऐसा भाग है जिससे कि नियोजक को बाध्य हुआ माना जाता है; यहाँ स्थायी आदेश कर्मचारी पर बीमारी की छुट्टी के अधिकार को एक संविदा द्वारा प्रदान करता है। ऐसे प्रकरण में कर्मचारी अपने इस अधिकार का प्रयोग कर सकता है और नियोजक उससे इस बात की अपेक्षा नहीं कर सकता कि बीमारी विषयक प्रसुविधा की याचना कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम के अन्तर्गत करे। इस अधिनियम का प्रवर्तन कतिपय औद्योगिक संस्थानों पर नहीं किया जायेगा–यह अधिनियम ऐसे कर्मकारों पर लागू नहीं होता जो कि ऐसे औद्योगिक संस्थानों में नियोजित हैं तो निम्नलिखित नियमों के द्वारा आवृत्त होते हैं–

- ■ आधारभूत और अनुपूरक नियमावली;
- ■ सिविल सेवायें (वर्गीकरण, नियंत्रण और अपील) नियमावली;
- ■ सिविल सेवायें (अस्थायी सेवा) नियमावली;
- ■ पुनरीक्षित अवकाश नियमावली;
- ■ सिविल सेवा नियमावली;
- ■ प्रतिरक्षा सिविलियन्स (वर्गीकरण, नियन्त्रण और अपील) सेवा नियमावली,
- ■ भारतीय रेलवे प्रस्थापना संहिता, या
- ■ कोई अन्य नियमावली जिसे कि इस निमित्त समुचित सरकार द्वारा गजट अधिसूचना द्वारा विज्ञापित किया जाय।

प्रत्यक्षतः ये नियम निजी प्रबन्ध व्यवस्था के अन्तर्गत या सांविधिक प्रबन्ध व्यवस्था के अधीन औद्योगिक संस्थानों में लागू नहीं होते हैं। फिर भी समुचित सरकार इस अधिनियम का विस्तारण जैसा कि वह उचित समझे, किसी भी औद्योगिक संस्थान या औद्योगिक संस्थान वर्ग के सम्बन्ध में कर सकती है।

अधिनियम की प्रमुख विशेषतायें–औद्योगिक नियोजन (स्थायी आदेश) अधिनियम, 1946 की प्रमुख विशेषतायें निम्नलिखित हैं–

- ■ प्रत्येक ऐसे औद्योगिक संस्थान के नियोजकों से, जिनमें कि यह अधिनियम लागू है, या अपेक्षा की जाती है कि वह स्थायी आदेश तैयार करें और उन्हें प्रमाणन-अधिकारी के समक्ष प्रमाणीकरण हेतु समर्पित करें। यह अधिकारी साधारणतया श्रम-आयुक्त हुआ करता है।
- ■ इस अधिनियम के अधीन कर्मकार की परिभाषा में कतिपय परिस्थितियों में पर्यवेक्षीय प्राविधिक व्यक्ति अन्तर्विष्ट माना जाता है।
- ■ प्रमाणकर्ता-अधिकारी को इस बात की शक्ति प्राप्त है कि स्थायी आदेशों के प्रालेख में कुछ बढ़ी-घटी या परिवर्तन कर सके।
- ■ समान औद्योगिक संस्थापनों के नियोजक संयुक्त स्थायी आदेशों का प्रालेख भी समर्पित कर सकते हैं।
- ■ सरकार नियमों के द्वारा इस अधिनियम के प्रयोजनों के निमित्त आदर्श स्थायी आदेशों की भी व्यवस्था कर सकती है। किसी नियोजक द्वारा तैयार किये गये स्थायी आदेशों के प्रालेख को जहाँ तक सम्भव हो, आदर्श स्थायी आदेश की समरूपता में बनाया जाना चाहिए। ऐसे प्रालेख आदर्श स्थायी आदेशों की प्रतिकूलता में कदापि नहीं हो सकते।
- ■ यह नियम लगभग सभी ऐसे औद्योगिक संस्थापनों पर लागू होता है जहाँ कि एक सौ या एक सौ से अधिक कर्मचारियों को नियोजित किया गया है।
- ■ समुचित सरकार गजट अधिसूचना द्वारा इस अधिनियम के किसी उपबन्ध के प्रवर्तन से किसी औद्योगिक संस्थापन को छूट प्रदान कर सकती है।
- ■ प्रमाणकर्त्ता-अधिकारियों और अपीलीय प्राधिकारियों को इस अधिनियम की धारा 11 के अधीन के कतिपय मामलों के सम्बन्ध में ऐसी सभी शक्तियाँ प्राप्त होंगी जो कि ऐसे मामलों में एक सिविल न्यायालय को प्राप्त होती हैं।
- ■ प्रमाणीकरण के निमित्त स्थाई आदेशों के प्रालेख को समर्पित न करने पर नियोजक को दण्डित किया जा सकता है, या अन्तिम रूप में प्रमाणीकृत किसी उपबन्ध का खण्डन करने के लिए उसे दण्ड का भागी माना जायेगा।
- ■ समुचित सरकार गजट अधिसूचना के पूर्व प्रकाशित किये जाने के उपरान्त इस अधिनियम के प्रयोजनों के परिपालन के निमित्त नियमावली बना सकती हैं।

व्यवसाय संघ अधिनियम, 1926

भारत के व्यवसाय संघों के विकास आन्दोलन में इसका इतिहास दृष्टिगत होता है और इस विकास का प्रारम्भ सन् 1890 से हुआ जबकि बम्बई मिलहैण्ड्स एसोसिएशन नाम से सर्वप्रथम कर्मकारों का एक संघ बम्बई में गठित किया गया था। इस संघ का गठन बम्बई मिल-कर्मकारों की शिकायतों को दूर करने के सम्बन्ध में किया गया था। इस संघ को ठीक-ठीक श्रमिक संघ के रूप में उस अर्थ में मानना कठिन है जिस अर्थ में आज व्यवसाय संघों की परिभाषा दी गयी है। इस संघ की कार्य-प्रणाली के सम्बन्ध में आज बहुत ही कम बातें मालूम हैं।

औद्योगिक उथल-पुथल और आर्थिक असंतोष के कारण कारखानों और उद्योगों के क्षेत्र में कुछ कर्मकारों के हड़तालों के दृष्टान्त सामने आने लगे और उन हड़तालों का नियन्त्रण और पथ-निर्देशन उनकी कर्मकारी समितियाँ करती थीं और इन समितियों में स्वयं कर्मकारों के प्रतिनिधि हुआ करते थे। कई अवसरों पर इन हड़तालों में इस दृष्टि से सफलतायें मिलीं कि कर्मकारों की माँगों को पूरा कर दिया गया। इस प्रकार भारत में होने वाली हड़तालों में मिलने वाली सफलताओं ने भारत के व्यवसाय संघ आन्दोलन को और भी आगे बढ़ा दिया। साथ ही विश्वव्यापी श्रमिक चेतना ने भी इसे और अधिक प्रभावित किया। अन्तर्राष्ट्रीय श्रमिक संगठन के द्वारा भी हमारे देश में व्यवसाय संघ आन्दोलन को बहुत बड़ा बल मिला।

आजादी से पूर्व देश में व्यवसाय संघ आन्दोलन की प्रगति बहुत संतोषजनक नहीं रहा जबकि आजादी के बाद इसमें प्रगति हुई। उद्योग के प्रत्येक क्षेत्र में अब हम पर्याप्त व्यवसाय संघ विषयक क्रिया-कलाप देखते हैं यहाँ तक कि अब शायद ही कर्मकारों की ऐसी कोई श्रेणी छूटी हो जिसका अपना कोई संघ-संगठन न हो। श्रमिक समस्याओं के लिए भारत में गठित रायल कमीशन ने इस सम्बन्ध में निम्नलिखित विचार व्यक्त किये थे—

'व्यवसाय संघवाद को पूर्णतया प्रभावी बनाने के लिए दो बातें आवश्यक हैं—लोकतांत्रिक भावना और शिक्षा। लोकतांत्रिक आदर्श अब भी भारतीय मजदूरों में विकसित करने की आवश्यकता है और शिक्षा की कमी इन मजदूरों के लिए एक व्यवधान है। शिक्षा विषयक कठिनाई का सम्बन्ध केवल निरक्षरता से ही नहीं है। बहुत थोड़े से व्यावसायिक संघ परोपकारी (benevolent) काम कर सकने की सामर्थ्य रखते हैं। बहुसंख्यक संघों को अपने कार्यकर्त्ताओं को यह समझना बड़ा ही कठिन है कि यूनियन का चन्दा देना सार्वजनिक हित में है सिवाय उस समय के जब कोई विवाद सम्भावित हो या चल रहा हो।'

आजादी के पश्चात् से भारतीय नागरिकों में लोकतांत्रिक भावनाओं का विकास हो रहा है और उद्योगों में काम करने वाले कर्मकार इस सम्बन्ध में अपवाद नहीं कहे जा सकते। सन् 1920 में मद्रास उच्च न्यायालय में 'मद्रास वस्त्रोद्योग श्रमिक संघ के अधिकारियों के विरुद्ध बिन्नी कम्पनी की ओर से दायर किये गये एक वाद में आदेश जारी करते हुए संघ के अधिकारियों को इस बात के लिए प्रतिबन्धित कर दिया था कि वे कतिपय कर्मकारों को काम पर न लौटने के द्वारा अपने नियोजन की संविदा को भंग करने के लिए उत्प्रेरित न करें। प्रत्यक्षतः उस समय श्रमिक संघ के अधिकारियों ने अपने आपको अभियोजन और कारावास के दायित्वाधीन पाया था, भले ही उन्होंने श्रमिक संघ विषयक मान्य क्रिया-कलापों में ही भाग लिया था। उस समय उन्हें इस आवश्यकता का अनुभव हुआ था कि श्रमिक संघों को विधायी संरक्षण प्राप्त होना नितान्त आवश्यक है। अखिल भारतीय व्यवसाय संघ कांग्रेस के तत्कालीन महासचिव एन. एम. जोशी ने केन्द्रीय विधान सभा के समक्ष सफलतापूर्वक एक प्रस्ताव रखा जिसमें इस बात की मांग की गई कि श्रमिक संघों को संरक्षण प्रदान करने के लिये सरकार की ओर से विधायी कदम उठाये जाने चाहिये। यह प्रस्ताव नियोजकों को पसन्द न आया। वे इस प्रकार के किसी विधायी कदम उठाने के इतने अधिक विरोध में थे कि काफी समय बाद सन् 1926 में केन्द्रीय विधान सभा को भारतीय व्यवसाय संघ अधिनियम समिति पारित करने का अवसर मिल सका। इस अधिनियम का प्रवर्तन 1 जून, 1987 ई. को सम्भव हुआ।

यह उल्लेखनीय है कि किसी भी उद्योग में पूँजी और श्रम दोनों का अंशदान बराबर महत्व का है इसलिये किसी भी उद्योग की संवृद्धि उसके दो निर्णायक तत्वों, पूँजी और श्रम पर निर्भर करती है। पूँजी और श्रम अथवा पूँजीपति एवं श्रमिक के बीच समय-समय पर विवादों का उठ खड़ा होना अवश्यम्भावी है। इसलिये किसी भी औद्योगिक विधि का उद्देश्य इन दोनों के बीच स्वस्थ सम्बन्ध बनाये रखना है। अतः यदि इन दोनों के बीच कोई विवाद खड़ा होता है तो मध्यस्थता और समझौता के माध्यम से सुलझाने का प्रयास ऐसी विधियों में अभिप्सित होना चाहिये। व्यवसाय संघों का महत्त्व इस तथ्य में निहित है कि ऐसे संघ इस प्रकार की सामूहिक शक्ति उत्पन्न करते हैं कि नियोजक विषयक शर्तों को श्रमिकों के अनुकूल बनाया जा सके और साथ ही नियोजक और कर्मचारियों के बीच अच्छा सम्बन्ध बनाये रखा जा सके। अधिक अच्छे काम की दशायें सुरक्षित करने और श्रमिकों को विशेष अधिकार और उन्मुक्तियाँ दिलाने के सम्बन्ध में व्यवसाय-संघ जो रास्ता अपनाते हैं वे विधि, सामूहिक-सौदेबाजी, पारस्परिक आश्वासन और हड़ताल आदि है। भारत में व्यवसाय संघों में पारस्परिक आश्वासन की पद्धति का लगभग अभाव-सा है।

व्यवसाय संघों के मामले में उपयुक्त विधि की आवश्यकता पर सन् 1952 में भारतीय श्रमिक सम्मेलन में विचार हुआ। इसके बाद भारतीय व्यवसाय संघ (संशोधन) अधिनियम, 1960 की धारा 2 (च) 3, 4, 6, 14, 16 और 28 में कुछ परिवर्तन किए गये। पुनः कुछ परिवर्तन भारतीय व्यवसाय संघ (संशोधन) अधिनियम, 1964 में भी किये गये।

सन् 1969 में प्रस्तावित व्यवसाय संघ अधिनियम द्वारा एक संघ गठन का उद्देश्य रखा गया था। इस विधेयक में व्यवसाय संघ की परिभाषा को भी संशोधित करने का प्रस्ताव रखा गया जिसमें केवल कर्मचारियों के संघों को ही सम्मिलित किया जाय और नियोजकों के संघ को इस परिभाषा से बाहर रखा जाय।

औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947

आजादी के बाद विधिशास्त्र की एक नई शाखा का जन्म हुआ जिसे औद्योगिक विधि कहा जाता है। पूर्ण-स्वतंत्रता काल में यह विधि अविकसित अवस्था में थी, किन्तु आगे चलकर देश में उद्योग के क्षेत्र में प्रगति होने के साथ ही साथ औद्योगिक विधि का भी विकास हुआ।

औद्योगिक विधियों से भारत का एक बहुत बड़ा जन-समुदाय प्रभावित है। कुछ लोग इन विधियों के सीधे प्रभाव के अधीन हैं, यथा उद्योगपति, श्रमिक आदि। शेष ऐसे लोग हैं जो कि अप्रत्यक्ष रूप में इन विधियों के प्रभाव के अन्तर्गत आते हैं। वस्तुतः किसी भी देश का आर्थिक विकास वहाँ की औद्योगिक समृद्धि पर निर्भर करता है, तथा देश की उन्नति देश के उद्योगों पर निर्भर होने के कारण औद्योगिक विधियों का राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में अपना एक महत्वपूर्ण स्थान है।

औद्योगिक विवाद अधिनियम की कतिपय विशेषताएँ निम्नवत् हैं—

■ कोई औद्योगिक विवाद औद्योगिक न्यायाधिकरण को या तो विवाद से आबद्ध उभय पक्षकारों की सहमति पर, या राज्य-सरकार द्वारा ऐसा करना उपयुक्त समझे जाने पर विचार हेतु सन्दर्भित किया जा सकता है।
■ उक्त न्यायाधिकरण द्वारा दिये गये पंचाट को अधिक से अधिक एक वर्ष या इसके भीतर की निश्चित अवधि तक के लिये उभय पक्षकारों पर बन्धनकारी माना जाएगा और इसका प्रवर्तन सामान्यतया सरकार द्वारा किया जायेगा।
■ निम्नलिखित परिस्थितियों में हड़ताल और तालाबन्दी करने पर प्रतिषेध लगा दिया गया है।

(A) जब तक कि सुलह और अधिनिर्णय की कार्यवाहियाँ चल रही हों,
(B) जब तक कि सुलह की कार्यवाहियों में किये गये समझौते लम्बित हों, और
(C) जब तक कि न्यायाधिकरणों द्वारा दिये गये ऐसे पंचाट लम्बित है जिनको बन्धनकारी होने की मान्यता उपयुक्त सरकार द्वारा दी जा चुकी है।

■ लोक-हित अथवा आपात् की स्थिति में उपयुक्त सरकार इस अधिनियम के प्रयोजनों के निमित्त छः मास से अनधिक की अवधि के लिये कतिपय प्रमुख उद्योगों को लोक-उपयोगी सेवा के अन्तर्गत घोषित करने के लिए प्राधिकृत है।

इस प्रकार के विधानों का दूसरा उद्देश्य आर्थिक न्याय है। अधिकांशतः उत्पादन संबंधी सभी व्यवधान औद्योगिक विवादों के कारण होते हैं। वर्तमान आर्थिक परिस्थितियों में व्यापक रूप में एक असन्तोष दिखाई पड़ता है और यही असन्तोष औद्योगिक विवादों के मूल कारण हैं।

नियोजक अपनी सुदृढ़ आर्थिक स्थिति के कारण अपनी शर्तें कर्मचारियों पर लाद देता है। इसलिये श्रम-शक्ति और पूंजी का आर्थिक संघर्ष संगठित मजदूरों द्वारा सामूहिक रूप में लड़ा जाता है। यदि मजदूर वर्ग संगठित हो जाता है और सामूहिक रूप से सौदेबाजी करने पर उतर आता है तो निश्चय ही पूंजीपतियों पर वह इस बात का अधिक प्रभावकारी दबाव डाल सकता है कि वे उनके श्रम का एक न्यायोचित प्रतिदान करें। मजदूरों को उनके श्रम का उचित प्रतिदान करने की स्थिति उत्पन्न करते हुए आर्थिक न्याय सुनिश्चित करने के उद्देश्य से ही राज्य लोक-हितों के एक संरक्षण के रूप में राज्य द्वारा बनाये गये विनियमों (regulation) के द्वारा इस बीच में हस्तक्षेप करता है। हमारे संविधान द्वारा भी भारत के लोगों को आर्थिक न्याय की सुरक्षा प्रदान की गयी है।

औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 सम्पूर्ण भारत में लागू होता है। यह 1 अप्रैल, 1947 से प्रभावी हुआ है। औद्योगिक विवाद अधिनियम सामाजिक विधान का एक प्रगतिशील कदम है। जैसा कि इस अधिनियम की प्रस्तावना में कहा गया है कि इस अधिनियम का उद्देश्य औद्योगिक विवाद के शोध और निपटारे के लिए उपबन्ध करना है।

इस अधिनियम के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

■ नियोजक और कर्मचारियों के बीच अच्छे सम्बन्ध सुनिश्चित करने के उपायों को बढ़ाना;
■ नियोजकों और कर्मचारियों, नियोजकों और नियोजकों या कर्मकारों और कर्मकारों के बीच के औद्योगिक विवादों का शोध और उनका सुलझाव तथा पंजीकृत व्यवसाय संघों या व्यवसाय संघों के फेडरेशन या कर्मचारियों अथवा नियोजकों के संघों को पर्याप्त प्रतिनिधित्व सम्बन्धी अधिकार देना–
  - अवैध हड़तालों और तालेबन्दियों को रोकना;
  - काम से अलग रखने तथा छंटनी के सम्बन्ध में कर्मकारों को अनुतोष प्रदान करना, और
  - सामूहिक सौदेबाजी।

इस अधिनियम का उद्देश्य उद्योगों में काम करने वाले कर्मकारों की दशा में सुधार लाना भी है।

हड़ताल एवं तालाबंदी (Strike and Lockout)

धारा 22 हड़ताल और तालाबन्दी पर प्रतिबन्ध लगाती है। इस धारा का सम्बन्ध ऐसे उद्योगों में हड़ताल और तालाबन्दी से है जो कि लोक उपयोगिता सेवा के हित में संचालित है।

धारा 22 (1) में उपबन्धित है कि लोक उपयोगिता सेवा में नियोजित कोई भी व्यक्ति संविदा भंग करने के रूप में निम्नलिखित परिस्थितियों में हड़ताल पर नहीं जायेगा –

■ हड़ताल करने के पूर्व 6 सप्ताह की नोटिस नियोजक को दिये बिना,
■ ऐसी सूचना दिये जाने के चौदह दिन के अंदर,
■ ऊपर कथित किसी नोटिस में उल्लिखित तिथि के बीतने के पूर्व हड़ताल पर नहीं जायेगा, या
■ किसी समझौता अधिकारी के समक्ष संचालित कार्यवाहियों के लम्बित रहने की अवधि में और ऐसी कार्यवाहियों के समाप्त होने के बाद के 7 दिनों की अवधि में हड़ताल पर नहीं जायेगा।

यहाँ यह स्पष्ट है कि ये उपबन्ध कर्मकारों को हड़ताल पर जाने से प्रतिषेधित नहीं करते, अपितु इस बात की वांछनीयता करते हैं कि वे हड़ताल पर जाने से पूर्व कतिपय शर्तों को पूरा कर दें। इसके उपरान्त भी यह उपबन्ध केवल लोक-उपयोगिता सेवा विषयक उद्योगों पर लागू होते हैं, और लोक अनुपयोगिता सेवा पर यथावत् लागू नहीं होते।

धारा 22 (2) में उपबन्धित है कि कोई भी नियोजक जो कि एक लोक उपयोगिता सेवा संचालित कर रहा है, उसने कर्मकारों में से किसी के प्रति निम्नलिखित परिस्थितियों में कारखाना बन्दी नहीं करेगा –

■ जैसा कि यहाँ उपबन्धित है कारखाना बन्दी के छः सप्ताह पूर्व कारखाना बन्दी की नोटिस दिये बिना, या
■ ऐसी नोटिस देने के 14 दिनों के अन्दर, या
■ ऊपर कथित किसी नोटिस में उल्लिखित बन्दी की तारीख बीतने के पूर्व, या
■ किसी समझौता अधिकारी के समक्ष संचालित कार्यवाहियों के लम्बित रहने की अवधि में और ऐसी कार्यवाहियों के सम्पन्न हो जाने के बाद की सात दिनों की अवधि के भीतर।

तालाबन्दी की नोटिस – धारा 22 के अन्तर्गत तालाबन्दी के लिए नोटिस का दिया जाना आवश्यक है। बिना पूर्व नोटिस के तालाबन्दी धारा 24 के अन्तर्गत अवैध होगी।

धारा 22 (3) में उपबन्धित है कि हड़ताल या तालाबन्दी के बारे में उपधाराओं (1) और (2) में यथा उपबन्धित नोटिस के प्रतिबन्ध को कतिपय प्रकरणों में हटाया भी जा सकता है। यथा –

■ हड़ताल की कोई नोटिस वहाँ आवश्यक नहीं होगी जहाँ कि सम्बन्धित लोक उपयोगिता सेवा में पहले से ही तालाबन्दी अस्तित्व में है।
■ तालाबन्दी की नोटिस वहाँ आवश्यक नहीं होगी जहाँ कि सम्बन्धित लोक उपयोगिता-सेवा में पहले से ही हड़ताल अस्तित्व में है।

नियोजक हड़ताल या ताला बन्दी की सूचना उल्लिखित प्राधिकारी को उसी दिन देना होगा जिस दिन कि उसकी घोषणा की गई है। जिस प्राधिकारी के नाम संसूचना का भेजा जाना वांछित है उसका नाम समुचित सरकार या साधारणतया या एक विशिष्ट क्षेत्र के लिये या किसी विशिष्ट लोक उपयोगिता सेवा के लिये निर्दिष्ट कर देगी।

'संविदा भंग करने के फलस्वरूप' से सेवा की संविदा या नियोजन की संविदा का बोध होता है, भले ही वह संविदा प्रत्यक्ष या सन्निहित हो। इस बात की कोई संविदा हो ही नहीं सकती कि कर्मकार हड़ताल पर नहीं जायेंगे। यदि ऐसी कोई संविदा अस्तित्व में है तो वैध सेवा के अंग के रूप में नहीं माना जा सकता। संविदा भंग करने का तात्पर्य सेवा की शर्त को भंग करने से नहीं है।

अधिनियम की धारा 22 या 23 के उपबन्धों को भंग करने में अधिनियम की धारा 26 में वर्णित दण्ड उत्पन्न हो जाता है। इसलिये किसी व्यक्ति को दायित्वाधीन मानने के लिये अभियोजन द्वारा दो बातों को सिद्ध किया जाना आवश्यक है –

(1) यह कि हड़ताल एक ऐसे प्रतिष्ठान में की गई थी जो कि अधिनियम की धारा 2 (ढ) के अर्थ के अन्तर्गत एक लोक-उपयोगिता सेवा का संचालन कर रहा है, और

(2) यह कि वह हड़ताल कर्मकारों को सेवा संविदा के भंग के स्वरूप घटित की गई थी।

'हड़ताल करने के छः सप्ताह के भीतर' और 'ऐसी नोटिस देने के चौदह दिन के भीतर' की शब्दावलियों का अभिप्राय – इन दिनों उपबन्धों को एक साथ पढ़ने पर इसका अभिप्राय यह है कि किसी लोक-उपयोगिता सेवा में नियोजित व्यक्ति निम्नलिखित शर्तों के अधीन रहते हुए नियोजक जो नोटिस देने के उपरान्त हड़ताल पर जा सकते हैं –

- नोटिस देने के छः सप्ताह के भीतर हड़ताल शुरू हो जाय, और
- ऐसी नोटिस देने के बाद 14 दिन की अवधि पूरी हो चुकी हो।

इस प्रकार हड़ताल केवल उस समय हो सकती है जबकि ऐसी नोटिस देने के बाद 14 दिन तो बीत चुके हैं किन्तु छः सप्ताह की अवधि समाप्त नहीं हुई है। नोटिस देने के बाद यह 14 दिन की न्यूनतम अवधि जिसके भीतर कि कर्मकारों को हड़ताल पर जाने से निषेधित कर दिया गया है एक ऐसा सिद्धान्त है जिसके पीछे नियोजक को कुछ समय कर्मकारों की माँग पर विचार करने के लिए देना है और सरकार के श्रम विभाग को इस बात की सूचना देना है कि वह इस मामले में हस्तक्षेप करे जिससे कि समझौता के कुछ सूत्र निकाले जा सकें और प्रस्तावित हड़ताल को रोका जा सके।

समझौता-कार्यवाहियों के लम्बित पर – इस शब्दावली का प्रयोग धारा 22 (1) (घ) में किया गया है। समझौता कार्यवाही से किसी समझौता अधिकारी के समक्ष संचालित कार्यवाही अभिप्रेत है। ऐसे प्रकरण में समझौता विषयक कार्यवाही लम्बित थी और कर्मकारों का एक संघ पक्षकार था, उस प्रकरण में उच्चतम न्यायालय द्वारा विचार व्यक्त किया गया कि धारा 18 (3) के अनुसार किया गया निपटारा केवल उन कर्मकारों को बाधित नहीं करेगा जो कि उस संघ के सदस्य थे, अपितु उन सभी कर्मकारों को भी बाधित करेगा जो कि उस संस्थापन में कार्य कर रहे हैं। इसलिए यदि कार्यवाही का सम्बन्ध ऐसे मामले से है जो कि सभी कर्मचारियों से सम्बन्धित है तो उसका लम्बित होना सभी कर्मचारियों के लिए एक प्रतिरोध का काम करेगा।

हड़तालों और कारखाना बन्दियों पर साधारण प्रतिषेध–

धारा 23 में हड़ताल और कारखाना बन्दियों पर लगाया गया प्रतिषेध सर्वमान्य प्रकृति का है। प्रवर्तन लोक उपयोगिता और गैर लोक उपयोगिता संस्थापनों दोनों पर समान रूप से होता है। कर्मकारों द्वारा संविदा भंग के स्वरूप हड़ताल का किया जाना और तदैव रूप में नियोजक द्वारा कारखाना बन्दी का किया जाना निम्नलिखित प्रकरणों में प्रतिषेधित है –

- विवाचक के समक्ष संचालित विवाचन की कार्यवाही के लम्बित रहने की अवधि में और ऐसी कार्यवाही के सम्पन्न हो जाने के बाद के दो मास की अवधि में, जहाँ कि धारा 10-क की उपधारा (3-क) के अधीन अधिसूचना जारी की जा चुकी है।
- श्रम न्यायालय, अधिकरण या राष्ट्रीय अधिकरण के समक्ष संचालित कार्यवाही के लम्बित रहने की अवधि में और ऐसी कार्यवाही के उत्पन्न होने के बाद के दो मास की अवधि में।
- किसी भी ऐसी अवधि में जिसमें कि निपटारा या पंचाट का कार्यान्वयन ऐसे मामले में किया जा रहा है जो कि उस निपटारा या पंचाट से सम्बन्धित है।
- बोर्ड के समक्ष संचालित समझौता कार्यवाही के लम्बित रहने की अवधि में और ऐसी कार्यवाहियों के समाप्त हो जाने के सात दिनों तक।

इन उपबन्धों का प्रयोजन समझौता के लिये एक अनुकूल और शान्तिप्रद वातावरण तैयार करना जिससे कि समझौता, न्याय निर्णयन का विवाचन की कार्यवाहियाँ सरलतापूर्वक संचालित की जा सकें। यह धारा अपनी सर्वसामान्य प्रकृति के कारण सभी हड़तालों और कारखानाबन्दियों को आवृत्त कर लेती हैं, भले ही इन प्राधिकारियों के समक्ष लम्बित कार्यवाहियों की विषय-वस्तु कुछ भी क्यों न हो।

यह युक्तियुक्त होगा कि जब कभी किसी एक कर्मकार के हित रक्षा हेतु कर्मकारगण उससे सम्बन्धित मामले के सम्बन्ध में औद्योगिक विवाद खड़ा करते हैं तो ऐसे विवाद के न्याय निर्णयन के लम्बित रहने की अवधि में उन्हें हड़ताल से रोका जाय।

अवैध हड़तालें और कारखानाबन्दियाँ–

धारा 24(1) के अनुसार हड़ताल या कारखानाबन्दी निम्नलिखित परिस्थितियों में अवैध होगी –

- लोक-उपयोगिता सेवा में उसका प्रारम्भ या घोषित किया जाना धारा 22 का खण्डन करता हो,
- उसका प्रारम्भ किया जाना धारा 23 का खण्डन करता हो,
- धारा 10(3) या धारा 10-क की उपधारा 4-क के अन्तर्गत समुचित सरकार द्वारा किये गये आदेश का निरन्तरित खण्डन करता हो।

अवैध हड़तालों के लिए दण्ड –

कर्मकारों को हड़ताल करने का यदि मौलिक अधिकार नहीं प्राप्त है तो भी एक अधिकार अवश्य प्राप्त है। यदि कोई हड़ताल अवैध है तो उसकी अवैधता के लिए दोषी पक्षकार अधिनियम की धारा 26 के अंतर्गत दण्ड का भागी है। यहां तक कि अवैध हड़तालों के सम्बन्ध में भी एक वर्गीकरण (1) अवैध किन्तु न्यायोचित हड़ताल (2) अवैध और अन्याययुक्त हड़ताल के रूप में किया गया है। यद्यपि यह वर्गीकरण वैध नहीं माना जाता है।

जब कभी भी किसी कर्मचारी के विरुद्ध जब्ती की कार्यवाही की जाती है इस आधार पर कि उसने अवैध हड़ताल में भाग लिया तथा कार्य पर उपस्थित नहीं रहा तो यह आवश्यक है कि इस कार्यवाही से पूर्व उसे सुने जाने का उचित अवसर प्रदान किया जाये। प्राकृतिक न्याय के सिद्धान्तों का अनुपालन किये बगैर जब्ती की कार्यवाही नहीं की जानी चाहिये।

हड़ताल के पर्यावसान के उपरान्त कर्मकारों को बहाल किये जाने विषयक अधिकार –

हड़ताल करने वाले कर्मकारों का हड़ताल की समीप्य पर काम पर बहाल करने का अधिकार इस बात पर निर्भर करता है कि क्या वह हड़ताल नियोजक की ओर से अनुचित श्रम अभ्यास अपनाने के परिणामस्वरूप है अथवा नहीं। यदि वह हड़ताल ऐसे अनुचित श्रम अभ्यास का परिणाम है जिसके लिये कि नियोजक को दोषी कहा जा सकता है तो कर्मकारों को बहाल किये, जाने का अधिकार प्राप्त है।

इसके विपरीत यदि नियोजक अनुचित श्रम अभ्यास करने का दोषी नहीं है और उसने मध्यवर्ती समय में काम को संचालित रखने के लिये दूसरे कर्मकारों को नियोजित कर लिया है तो हड़ताली कर्मचारियों को बहाल किये जाने का कोई अधिकार नहीं प्राप्त है। पूर्ववर्ती प्रकरण में आवश्यक है कि हड़ताल समाप्त हो जाने के बाद, भले ही नियोजक ने अन्तरिम व्यवस्था के रूप में कार्य को संचालित करने के लिये दूसरे कर्मकार को नियोजित कर लिया हो तब भी हड़ताली कर्मचारियों को कार्य पर बहाल करे।

अनुचित श्रम अभ्यास क्या है यह इस अधिनियम की अनुसूची 5 में दिया गया है। यदि हड़ताल उचित है तो किसी कर्मकार को अवैध हड़ताल में भाग लेने के लिए पदच्युत नहीं किया जा सकता है।

अवैध हड़तालों और कारखानाबन्दियों को आर्थिक सहायता पहुँचाने पर प्रतिबन्ध –

धारा 25 अवैध हड़ताल और अवैध कारखानाबन्दी दोनों को आर्थिक सहायता पहुँचाने से प्रतिषेधित करती है। इस धारा में कहा गया है कि कोई भी व्यक्ति जान-बूझकर किसी अवैध हड़ताल या कारखानाबन्दी को प्रत्यक्ष बढ़ावा देने या समर्थन करने में किसी धन का व्यय या प्रयोग नहीं करेगा। इसके अनिवार्य तत्व निम्नलिखित हैं –

- जो व्यक्ति धन का व्यय कर रहा हो, उसे इस बात की जानकारी हो कि हड़ताल या कारखाना बन्दी अवैध है।
- धन का व्यय करना या लगाना,
- हड़ताल या कारखाना बन्दी यथार्थतः अवैध हो,
- किसी अवैध हड़ताल या कारखाना बन्दी के प्रत्यक्ष अग्रसरण में धन का व्यय करना या लगाना।

हड़ताल के प्रकार (Types of Strikes)– हड़ताल के अनेक रूप होते हैं। इसके विभिन्न रूपों को हड़ताल का प्रकार कहते हैं। विद्वानों के द्वारा हड़ताल के कुछ महत्वपूर्ण रूप इस प्रकार बतलाए गए हैं–

(1) आम हड़ताल (General Strike)– जब किसी भी शहर में या किसी स्थान पर एक साथ अनेक उद्योगों में हड़ताल कर दिए जाएँ तो उस प्रकार के हड़ताल को आम हड़ताल कहते है। भारत में पहली बार आम हड़ताल की लहर 1921 में बंबई में शुरू हुई और 1934 तक अनेक शहरों में आम हड़ताल किए गए।

(2) विशिष्ट हड़ताल (Particular Strike)– जब हड़ताल किसी एक कारखाना में किया जाए तो उस प्रकार के हड़ताल को विशिष्ट हड़ताल कहते हैं। यदि हड़ताल केवल टिस्को या टेलको में किया जाए तो इसे विशिष्ट हड़ताल का नाम दिया गया है।

(3) संगठित हड़ताल (Organised Strike)– जब किसी उद्योग में हड़ताल करने के पहले काफी तैयारी कर लिया जाए और सभी तैयारियों के बाद हड़ताल किया जाए तो उस प्रकार के हड़ताल को संगठित हड़ताल कहा जाता है।

(4) असंगठित हड़ताल (Unorganised Strike)– जब किसी उद्योग में हड़ताल बिना किसी तैयारी के एकाएक कर दिया जाए तो उस प्रकार के हड़ताल को Unorganised strike कहा जाता है।

(5) प्राधिकृत हड़ताल (Authorised Strike)– डैंकर्ट महोदय ने अपनी पुस्तक में कहा है कि जब कोई मजदूर संघ अपनी आम सभा की बैठक बुलाए और उस बैठक में हड़ताल पर जाने के लिए मतदान कराए (Strike Ballot) और उस मतदान के बाद हड़ताल पर जाने का निर्णय लिया जाए तो उस प्रकार के हड़ताल को प्राधिकृत हड़ताल कहा जाता है।

(6) अनधिकृत हड़ताल (Un-authorised Strike)– यदि कोई मजदूर संघ बिना हड़ताल पर मतदान कराए (Without Strike Ballot) अपने मन से हड़ताल पर जाने का निर्णय ले ले तो उस प्रकार के हड़ताल को अनधिकृत हड़ताल कहा जाता है।

(7) तड़ित हड़ताल (Quickie or Lightning Strike)– जब किसी घटना को लेकर मजदूर एकाएक हड़ताल कर दे तो उस हड़ताल को तड़ित हड़ताल कहा जाता है।

(8) जंगली-बिल्ली हड़ताल (Wild-Cat Strike)– डैंकर्ट महोदय ने अपनी पुस्तक में कहा है कि यदि किसी घटना को लेकर मजदूर एकाएक हड़ताल पर चले जाएँ और कुछ ही समय में हड़ताल समाप्त भी हो जाएँ तो उस प्रकार के हड़ताल को Wild-Cat Strike कहा जाता है। जिस तरह जंगल में बिल्ली आती है और चली जाती है उसी तरह Wild-Cat Strike शीघ्र उत्पन्न होते है और शीघ्र ही समाप्त भी हो जाते हैं।

(9) राजनीतिक हड़ताल (Political Strike)– जब किसी राजनीतिक कारण को लेकर मजदूर हड़ताल पर चले जाएँ तो उस प्रकार के हड़ताल को राजनीतिक हड़ताल कहा जाता है। आज भारत में बिहार बंद, उद्योग बंद, भारत बंद जैसी घटनाएँ राजनीतिक हड़ताल की उदाहरण कही जा सकती है।

(10) अवैध हड़ताल (Illegal Strike)– जब किसी देश में हड़ताल उस देश के कानूनों के नियमों का उल्लंघन करते हुए किया जाए तो उस प्रकार के हड़ताल को Illegal Strikes कहा जाता है। इस प्रकार हड़ताल के भिन्न-भिन्न रूप है जिनको संक्षिप्त चर्चा ऊपर की गई है।

(11) कल्याणकारी राज्य (Welfare State)– हमारे देश के संविधान में यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि भारत एक कल्याणकारी राज्य होगा। देश में रहने वाले सभी नागरिकों के कल्याण के लिए सरकार प्रयास करेगी। यदि हड़ताल करने का अधिकार मुक्त रूप से सबको प्रदान कर दिया जाए तो इससे संगठित लोगों की स्थिति (Organised Sector) सुधर जाएगी लेकिन असंगठित, कमजोर वर्ग की स्थिति और दयनीय हो जाएगी। क्योंकि इस प्रकार के लोग हड़ताल नहीं कर सकते हैं। अतः देश में सभी लोगों के कल्याण को दृष्टिकोण में रखते हुए हड़ताल का अधिकार मुक्त रूप से नहीं दिया जा सकता है। इस पर नियंत्रण अवश्य लगा दिया जाना चाहिए।

मजदूरी संदाय अधिनियम, 1936

1925 में सर्वप्रथम विधान सभा में एक गैर सरकारी विधेयक प्रस्तुत किया गया जिसका शीर्षक, ''साप्ताहिक भुगतान विधेयक'' था। उस समय मजदूरी के भुगतान के सम्बन्ध में भिन्न-भिन्न अवधियां प्रचलित थीं। भिन्न वेतन अवधियों से अनेक बुराइयाँ उत्पन्न हो गई थीं। जिनमें से कुछ को दूर करने का प्रयास किया गया था। वे निम्न थीं–मजदूरी के भुगतान में विलम्ब, मजदूरी का भुगतान न किया जाना और नियोजक द्वारा लगाये गये जुर्माने के रूप में मजदूरी से कटौतियाँ कर लेना, आदि। यह विधेयक उस समय सरकार के इस आश्वासन पर वापस ले लिया गया था, कि यह प्रश्न सरकार के विचाराधीन है।

कर्मकारों पर नियोजकों द्वारा जुर्माने का लगाया जाना और यहाँ तक कि अनुपस्थिति की अवधि के लिये जुर्माने के रूप में मजदूरी की दुगुनी राशि की कटौती कर लेना उस समय की प्रचलित प्रथाओं में था। इन बुराइयों को दूर करना आवश्यक था। यही कारण था कि मजदूरी में जुर्माने के रूप में या अन्य कटौतियों द्वारा कमी करने पर विधि द्वारा रोक और नियन्त्रण लगाने की आवश्यकता का अनुभव सरकार ने वर्ष 1926 में किया।

शाह आयोग की अनुशंसा पर आधारित मजदूरी भुगतान अधिनियम विषयक विधेयक 1933 में विधान सभा में पुनः पारित किया गया। परन्तु वह विधेयक भी उस समय विधान सभा के विघटन के कारण अधिनियम का रूप न ले सका। अतः मजदूरी अधिनियम, 1936 में औपचारिक रूप में विधान सभा द्वारा पारित किया गया और इसका प्रवर्तन 28 मार्च, 1937 से आरम्भ हुआ।

इस अधिनियम की प्रस्तावना में उल्लिखित है कि इस अधिनियम का उद्देश्य नियोजित व्यक्तियों के कतिपय वर्गों की मजदूरी के संदाय को विनियमित करना है। यह विनियमन दो प्रकार से किया गया है–(1) मजदूरी अदा करने की तिथि के सम्बन्ध में, और (2) जुर्माना या अन्य रूप में मजदूरी से कटौतियाँ करने के सम्बन्ध में। मजदूरी भुगतान अधिनियम कतिपय ऐसी परिस्थितियों में, जिनमें कि मजदूरी का निर्धारण इस अधिनियम द्वारा किया गया है, कर्मचारियों की मजदूरी को सुरक्षा प्रदान करने के लिए अधिनियमित किया गया था।

मजदूरी संदाय अधिनियम द्वारा प्रशासित किसी कर्मकार की मजदूरी या वेतन में से किसी प्रकार की कटौती, जब तक कि अधिनियम द्वारा प्राधिकृत न हो, अवैध होगी। कर्मकारों के प्रतिनिधि संघ एवं नियोजक के बीच हुये किसी समझौते के अन्तर्गत कर्मकारों की मजदूरी में से कटौती को स्वीकृति प्रदान की जा सकती है क्योंकि यह कटौती दोनों पक्षकारों के समझौते के अन्तर्गत होती है तब भी इस कटौती को इस अधिनियम के अन्तर्गत वैध नहीं माना जा सकता है।

धारा 1. प्रवर्तन–मजदूरी संदाय अधिनियम 1936 का प्रवर्तन सम्पूर्ण भारत में विस्तारित है। इसका प्रवर्तन 28 मार्च, 1937 ई. से आरम्भ हुआ।

उपधारा (4) के अनुसार यह अधिनियम निम्नलिखित व्यक्तियों की मजदूरी के भुगतान पर लागू होता है।

- किसी कारखाना में नियोजित व्यक्ति,
- ऐसे व्यक्ति (कारखाना में नियोजित व्यक्ति से भिन्न) जो रेलवे प्रशासन द्वारा रेलवे में नियोजित हैं अथवा प्रत्यक्ष रूप से या किसी उप ठेकेदार द्वारा या ऐसे व्यक्ति द्वारा नियोजित हैं जो रेलवे प्रशासन के साथ संविदा की पूर्ति कर रहा है;
- ऐसे व्यक्ति जो किसी औद्योगिक अथवा अन्य संस्थापना में जो धारा 2 के खण्ड (ii) के उपखण्ड (क) से (छ) तक विहित है, में नियोजित है।

उपधारा (5) के अनुसार राज्य सरकार अपने इस आशय की तीन माह पूर्व सरकारी गजट में अधिसूचना द्वारा इस अधिनियम के उपबन्धों को या उनमें से कुछ उपबन्धों को किसी संस्थापना में नियोजित व्यक्तियों के वर्ग को अथवा ऐसे संस्थापना के वर्ग जो धारा 2 के खण्ड (ii) के उपखण्ड (ज) के अन्तर्गत केन्द्रीय अथवा राज्य सरकार द्वारा विहित हो, में मजदूरी भुगतान के सम्बन्ध में लागू कर सकती है।

परन्तु केन्द्रीय सरकार द्वारा धारित ऐसी किसी संस्थापना के सन्दर्भ में ऐसी कोई अधिसूचना उस सरकार की सम्मति के बिना जारी नहीं की जाएगी।

उपधारा (6) यह अधिनियम किसी मजदूरी अवधि के लिए नियोजित व्यक्ति को संदेय मजदूरी को लागू होती है यदि उस मजदूरी अवधि के लिए संदेय ऐसी मजदूरी छह हजार पाँच सौ रुपये प्रति माह या अन्य उच्चतर राशि से अधिक नहीं है जो राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन द्वारा प्रकाशित उपभोक्ता व्यय सर्वेक्षण के आंकड़ों के आधार पर केन्द्रीय सरकार प्रत्येक पाँच वर्ष के पश्चात् शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा विनिर्दिष्ट करें।

कारखाना अधिनियम, 1948 अग्रलिखित को कारखाना माना गया है–

- एक आरा-मिल, ओटन कारखाना जो कि एक ही छत के नीचे स्थित हो और एक ही लोकोमोटिव शक्ति द्वारा चलाया जाता हो, और जिसमें कि 10 से अधिक व्यक्ति नियोजित हों।
- ऐसे परिसर जहाँ कि किसी सामग्री को बनाने और बनाकर बिक्री करने योग्य तैयार करने का काम किया जाता है।
- कोई ऐसा परिसर जहां अधिनिर्माण की प्रक्रिया संचालित है जैसे मशीन कक्ष, शेड गोदाम और गोदाम घेरा आदि।
- गुड़हल घर कारखाना, रेलवे कार्यशाला और ऐसा घेरा जो मूंगफली सुखाने के प्रयोग में लाया जाता है।

औद्योगिक या अन्य संस्थापन–''औद्योगिक या अन्य संस्थापन'' से निम्नलिखित अभिप्रेत है–

- ट्रामवे सेवा या मोटर निर्वाचन सेवा जो कि भाड़े या पारितोषिक पर सड़क द्वारा यात्री, माल या दोनों के ले आने में संलग्न है,

हवाई निर्वहन सेवा, ऐसी सेवा से भिन्न है जो कि भारत संघ की सेना, नौ सेना या वायु सेना या भारत सरकार के नागरिक उड्डयन विभाग से सम्बन्धित हों या उसमें एकमात्र रूप में नियोजित हो;

- डाक, घाट या तट में नियोजित हों,
- यन्त्रचालित अन्तर्देशीय पोत;
- खान, खदान या तेल क्षेत्र;
- बागान
- कार्यशाला या अन्य संस्थापन, जिसमें कि सामग्रियाँ इस दृष्टि से तैयार, अनुकूलित या अधिनियमित की जाती हैं कि उनका प्रयोग, निर्वहन या विक्रय किया जा सके;
- ऐसे संस्थापन जिसमें भवन, सड़क, पुल या नहरों के निर्माण, विकास या रख-रखाव सम्बन्धित कोई काम किया जाता है, या नौचालन, सिंचाई या पानी की आपूर्ति विषयक कोई क्रिया की जाती है या विद्युत के उत्पादन, अन्तरण और वितरण सम्बन्धी कोई काम होता है या विद्युत शक्ति सम्बन्धी कोई कार्य संचालित किया जाता है।
- किसी अन्य संस्थापन या संस्थापनों के किसी वर्ग जिसे केन्द्रीय अथवा कोई राज्य सरकार उसकी प्रकृति उसमें नियोजित व्यक्तियों की सुरक्षा तथा अन्य समुचित परिस्थितियों, को ध्यान में रखते हुए राजपत्रित अधिसूचना द्वारा विहित करें।

मजदूरी—मजदूरी से सभी प्रकार का पारिश्रमिक अभिप्रेत है, चाहे वह वेतन के रूप में हो, या भत्ता या अन्यथा रूप में अभिव्यक्त हो या इस रूप में अभिव्यक्त किये जाने के योग्य हो और जिसका कि भुगतान, यदि नियोजन की शर्तें प्रत्यक्ष या विवक्षित रूप में पूरी कर दी जाती है तो एक ऐसे व्यक्ति को देय हैं, जो कि उस नियोजन के सम्बन्ध में नियोजित हैं या नियोजन के सम्बन्ध में वह कोई कार्य करता है।

मजदूरी में निम्नलिखित सम्मिलित हैं—

- कोई पारिश्रमिक जो कि पक्षकारों के बीच किसी पंचाट या समझौता के अन्तर्गत, या न्यायालय के आदेश के अन्तर्गत देय है,
- कोई ऐसा पारिश्रमिक जिसके प्रति कि नियोजित व्यक्ति किसी अतिकालिक काम या छुट्टियाँ या छुट्टी की किसी अवधि के सम्बन्ध में शोध्य है,
- कोई अतिरिक्त पारिश्रमिक जो कि नियोजन की शर्तों के अधीन देय है, चाहे उसे बोनस या किसी अन्य नाम से पुकारा जाता हो। मजदूरी की परिभाषा केवल ऐसे पारिश्रमिक तक सीमित नहीं है जो कि अनुबन्ध या संविदा के अधीन देय हो। मजदूरी की संशोधित परिभाषा सभी प्रकार के पारिश्रमिक पर लागू होगी, चाहे वह किसी संविदा द्वारा उत्पन्न हो या पंचाट, समझौता या किसी संविधि के अधीन उत्पन्न हुई हो।
- कोई ऐसी धनराशि जो कि नियोजित व्यक्ति को सेवा से अलग किये जाने पर किसी विधि संविदा या निदेश पत्र के अधीन देय है, जिसमें कि ऐसी धनराशि के भुगतान का उपबन्ध किया गया है, चाहे उसमें कटौतियों सहित भुगतान का प्रश्न हो अथवा कटौतियों के बिना, किन्तु जिसमें कोई अवधि सीमा नहीं दी गई है जिसके भीतर यह भुगतान कर दिया जाना चाहिये;
- कोई ऐसी धनराशि, जिसे तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अन्तर्गत तैयार की गई योजना के अन्तर्गत एक नियोजित व्यक्ति प्राप्त करने का हकदार है।

मजदूरी के अन्तर्गत निम्नलिखित नहीं हैं—

- कोई बोनस जो कि उस पारिश्रमिक का अंश गठित नहीं करता जिसका कि भुगतान नियोजन की शर्तों के अन्तर्गत शोध्य है, या जो कि पक्षकारों के बीच किसी पंचाट या अनुबन्ध के आधार पर, या न्यायालय के आदेश के आधार पर शोध्य नहीं है। बोनस भुगतान अधिनियम, 1965 के अन्तर्गत शोध बोनस इस उपधारा की परिभाषा के अन्तर्गत मजदूरी के रूप में मान्य है।
- किसी आवासीय व्यवस्था का मूल्य या रोशनी, पानी, चिकित्सकीय उपचार या अन्य सुख-सुविधा का मूल्य या कोई ऐसी सेवा जो कि राज्य सरकार के किसी साधारण या विशिष्ट आदेश के अन्तर्गत मजदूरी में प्रगणित किये जाने से अपवर्जित है।
- नियोजक द्वारा किया गया कोई अंशदान जो कि पेंशन या भविष्य निधि के सम्बन्ध में किया गया हो और उस पर जो ब्याज संकलित हुआ हो,
- कोई यात्रा भत्ता या यात्रा से सम्बन्धित की गई रियायत का मूल्य,
- नियोजित व्यक्ति को अदा की गई कोई धनराशि जो कि उसके नियोजन की प्रकृति के कारण विशिष्ट खर्चे की आपूर्ति के लिये दी गई हो, या
- किसी ग्रैच्युटी की धनराशि जो कि उपखण्ड (घ) में उल्लिखित के अतिरिक्त अन्य नियोजन के समापन में देय हो।

बोनस संदाय अधिनियम, 1965 तहत बोनस नियोजन की विवक्षित शर्त हो गयी है जो कि अधिष्ठान को होने वाले लाभ पर आश्रित नहीं है। अतः कानूनी बोनस पारिश्रमिक की श्रेणी में आता है। इस दृष्टि से विचार करने पर 'मजदूरी' शब्द की परिभाषा के अन्तर्गत बोनस भी शामिल माना जायेगा।

छंटनी प्रतिकार के निमित्त शोध्य ऐसी धनराशि जो कि औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 25 ङ (ख) के अन्तर्गत कर्मचारियों को देय है, या ऐसी धनराशि जो कि कर्मचारियों को सेवाओं से अलग कर दिये जाने के कारण उन्हें देय हैं, मजदूरी भुगतान अधिनियम, 1936 के अर्थ में मजदूरी है।

औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 25-ग के अन्तर्गत काम से भिन्न रखने के सम्बन्ध में प्रतिकर की धनराशि के अन्तर्गत नहीं आती। ऐसी परिस्थिति में जहां मोटर निर्वहन कर्मकार अधिनियम, 1961 में बनाये गये नियम इस बात का उपबन्ध करते थे कि किसी श्रेणी में कर्मचारियों के प्रत्येक सदस्य एक वर्ष में दो जोड़ी जूते भी पोशाक के एक भाग के रूप में प्राप्त करेंगे, ऐसी परिस्थिति में दो जोड़ी चमड़े के जूते के लिये किया गया दावा मजदूरी की परिभाषा के अन्तर्गत आता है।

मजदूरी का संदाय और मजदूरी से कटौतियाँ

धारा 3. मजदूरी के संदाय के लिए उत्तरदायित्व– (1) प्रत्येक नियोजक इस अधिनियम के अधीन संदत्त किये जाने के लिए अपेक्षित समस्त मजदूरी का संदाय अपने द्वारा नियोजित व्यक्तियों को नियोजित करने के लिए उत्तरदायी होगा और अग्रलिखित में नियोजित व्यक्तियों के सम्बन्ध में—

- किसी कारखाने में, यदि किसी व्यक्ति को कारखाना अधिनियम 1948 की धारा 7 की उपधारा (1) के खण्ड (च) के अधीन कारखाने का प्रबन्धक निर्दिष्ट किया गया हो;
- रेलवे पर (कारखाने से भिन्न) यदि नियोजक रेलवे प्रशासन है और रेलवे प्रशासन ने इस निमित्त सम्बन्धित स्थानीय क्षेत्र के लिए किसी व्यक्ति को निर्दिष्ट किया गया हो;
- किसी औद्योगिक या अन्य संस्थापनों में यदि कोई व्यक्ति औद्योगिक या अन्य संस्थापना के पर्यवेक्षण और नियंत्रण के लिए नियोजक के प्रति उत्तरदायी है।
- किसी ठेकेदार के मामले में ऐसे ठेकेदार द्वारा पदाभिहित व्यक्ति जो प्रत्यक्ष प्रभार से उसके अधीन है, और
- किसी अन्य मामले में नियोजक द्वारा पदाभिहित कोई व्यक्ति जो अधिनियम के उपबन्धों के अनुपालन के लिए उत्तरदायी हो।

धारा 4. मजदूरी की अवधियों का नियत किया जाना अग्रलिखित है—

(1) धारा 2 के अन्तर्गत मजदूरी के भुगतान के लिए उत्तरदायी प्रत्येक व्यक्ति, मजदूरी की उन अवधियों को नियत करेगा जिनमें कि मजदूरी की अदायगी की जायेगी।

(2) मजदूरी की अदायगी की यह अवधि किसी भी प्रकरण में एक महीने से अधिक की नहीं होगी।

धारा 5. मजदूरी भुगतान का समय अग्रलिखित है—

(क) इस धारा में मजदूरी के भुगतान का समय निर्धारित करने की व्यवस्था की गई है। यदि किसी रेलवे कारखाना या औद्योगिक या अन्य संस्थापन में नियोजित व्यक्तियों की संख्या एक हजार व्यक्तियों से कम है तो वह मजदूरी के भुगतान की तिथि उस वेतनकाल के अन्तिम दर से 7 दिन के पूर्व वेतनकाल के सम्बन्ध में मजदूरी देय है। किसी अन्य रेलवे कारखाना या औद्योगिक या अन्य संस्थापन में प्रत्येक नियोजित व्यक्ति की मजदूरी के भुगतान की तिथि उस वेतनकाल के अन्तिम दिन 10 दिन बीतने के पूर्व होगी जिस वेतन काल के सम्बन्ध में मजदूरी देय है।

(ख) जहाँ किसी व्यक्ति का नियोजन उसके नियोजक द्वारा या उसकी ओर से समाप्त कर दिया जाता है, उस व्यक्ति द्वारा अर्जित मजदूरी का भुगतान सेवा-समाप्ति के दिन से दो काम के दिनों के बीतने के पहले कर दिया जायेगा। परन्तु यह कि जहाँ किसी व्यक्ति का नियोजन किसी संस्थापना के साप्ताहिक या अन्य छुट्टियों से भिन्न किसी कारण से बन्द किये जाने के फलस्वरूप समाप्त कर दिया जाता है तो कर्मचारी द्वारा अर्जित मजदूरी का भुगतान उसके नियोजन के समापन के दिन से दो दिन व्यतीत होने के पूर्व कर दिया जायेगा।

(ग) राज्य सरकार ऐसे विस्तार तक और ऐसी शर्तों के अधीन, जैसी कि आदेश में उल्लिखित किया गया हो सामान्य या विशिष्ट आदेश द्वारा उस व्यक्ति को धारा 5 के प्रवर्तन से ऐसे व्यक्तियों या व्यक्तियों की श्रेणियों की मजदूरी के सम्बन्ध में छूट प्रदान कर सकती है जो कि किसी रेलवे में नियोजित व्यक्तियों की मजदूरी के भुगतान के लिये उत्तरदायी है या ऐसे व्यक्तियों के भुगतान के सम्बन्ध में उत्तरदायी है जो कि केन्द्रीय सरकार के सार्वजनिक निर्माण-विभाग या राज्य सरकार के उक्त विभाग में रोजाना के कर्मकार के रूप में नियोजित हैं। परन्तु यह कि रोजाना के दर पर नियोजित ऊपर कथित कर्मकारों के प्रकरण में केन्द्रीय सरकार के परामर्श के बिना कोई आदेश नहीं दिया जायेगा।

धारा 6. मजदूरी का भुगतान चालू सिक्कों या करेन्सी नोटों के रूप में किया जायेगा—सभी मजदूरियों का भुगतान चालू सिक्कों या करेन्सी नोटों या दोनों के रूप में किया जायेगा। परन्तु नियोजक किसी नियोजित व्यक्ति से लिखित प्राधिकार-पत्र प्राप्त करने के उपरान्त उसकी मजदूरी का भुगतान चेक द्वारा या बैंक में उसके खाते के लेखा में जमा करने के द्वारा कर सकता है।

धारा 7. मजदूरी में जो कमी की जा सकती है—(1) रेलवे अधिनियम 1989 (24 सन् 1989) के उपबन्धों के बावजूद भी, किसी नियोजित व्यक्ति की मजदूरी बिना किसी प्रकार की कटौती के अदा की जायेगी। मजदूरी से केवल ऐसी कटौतियाँ की जा सकती हैं जो इस अधिनियम के द्वारा या अन्तर्गत अधिकृत है।

धारा 8. जुर्माने के तहत निम्न आते हैं—

- किसी भी नियोजित व्यक्ति के ऊपर उसके द्वारा किये गये केवल ऐसे कार्यों या लोपों के सम्बन्ध में जुर्माने लगाये जा सकते हैं जिसे कि नियोजक ने राज्य सरकार या विहित प्राधिकारी के पूर्ववर्ती अनुमोदन से उपधारा (2) के अन्तर्गत अधिसूचना द्वारा उल्लिखित किया हो।
- जुर्माने की कुल धनराशि जो कि किसी नियोजित व्यक्ति की किसी एक मजदूरी अवधि में आरोपित की जा सकती है, उस धनराशि से अधिक नहीं होगी कि उस मजदूरी अवधि के सम्बन्ध में उस व्यक्ति को देय मजदूरी की धनराशि के तीन प्रतिशत के हिसाब से आती हो।
- 15 वर्ष से कम आयु वाले किसी नियोजित व्यक्ति पर कोई जुर्माना नहीं लगाया जायेगा।
- किसी नियोजित व्यक्ति पर आरोपित किया गया कोई जुर्माना किस्तों में या जुर्माना आरोपित किये जाने के 90 दिनों के बीत जाने के बाद वसूल नहीं किया जायेगा।
- प्रत्येक जुर्माना उस तिथि को लगाया गया माना जायेगा जिस तिथि को कि वह कार्य या लोप घटित हुआ हो जिसके सम्बन्ध में जुर्माना आरोपित किया गया है।
- ऐसे कार्यों और लोपों का उल्लेख करते हुये एक अधिसूचना उस परिसर में विहित पद्धति से प्रदर्शित की जायेगी जिसके कि वह नियोजन संचालित किया जा रहा है या रेलवे में नियोजित व्यक्तियों के प्रकरण में (एक कारखाना से भिन्न की स्थिति में) यह अधिसूचना विहित स्थान या स्थानों पर लगायी जायेगी।
- किसी भी कर्मचारी पर उस समय तक जुर्माना नहीं लगाया जायेगा जब तक कि उसे उस जुर्माने के विरुद्ध कारण स्पष्ट करने का अवसर न दे दिया गया हो या अन्यथा रूप में इस अधिनियम के अन्तर्गत विहित जुर्माना आरोपित करने की पद्धति की अनुसरण न किया गया हो।
- सभी जुर्माने और जुर्माने की सभी वसूलियाँ धारा 3 के अधीन मजदूरी अदा करने के लिए उत्तरदायी व्यक्ति द्वारा यथाविहित प्रारूप में एक रजिस्टर में अंकित की जायेंगी। जुर्माने के रूप में की गयी सभी वसूलियाँ केवल ऐसे प्रयोजनों में लगाई जायेंगी जो कि कारखाना या संस्थापना में नियोजित व्यक्ति के लाभ के निमित्त हों और जो कि विहित प्राधिकारी द्वारा अनुमोदित हो।

धारा 9. कार्य से अनुपस्थित रहने के निमित्त कटौतियाँ अग्रलिखित है—(1) धारा (2) के खण्ड (ख) में कार्य से अनुपस्थित रहने के सम्बन्ध में कोई कटौती केवल तब की जायेगी जबकि नियोजित व्यक्ति उस समय या उन स्थानों से अनुपस्थित रहा हो जहाँ कि नियोजन की शर्तों के अनुसार उसे उपस्थित होना चाहिये था। यह भी उपबन्धित हैं कि ऐसी अनुपस्थिति उस पूर्ण अवधि के लिये या उस अवधि के भाग के लिए होनी चाहिये जिसमें कि नियोजित व्यक्ति से काम पर उपस्थित रहने के लिए अपेक्षा की जाती है।

(2) ऐसी कटौती की राशि और नियोजित व्यक्ति को उस वेतनकाल जिसके सम्बन्ध में कटौती की जा रही है, में देय मजदूरी में किसी भी दशा में उससे बड़ा अनुपात नहीं होगा जो अनुपात उस अवधि जिसमें वह अनुपस्थित रहा है, का उस पूरी अवधि से है, जो ऐसे वेतन काल के अन्दर जिसके दौरान अपने संविदा शर्तों के द्वारा उसके काम करने की अपेक्षा की जाती थी;

परन्तु यह कि, इस सम्बन्ध में राज्य सरकार द्वारा बनाये गये किन्हीं नियमों के अधीन रहते हुये, यदि 10 या अधिक नियोजित व्यक्ति एकमत होकर अपने को बिना उचित नोटिस दिये और बिना युक्तिसंगत हेतु के अनुपस्थित रहते हैं तो किसी ऐसे व्यक्ति से की जाने वाली ऐसी कटौती में ऐसी राशि, जो उसकी 8 दिनों की मजदूरी से अधिक न होगी जो कि किन्हीं निर्बन्धनों द्वारा नोटिस के एवज में नियोजक द्वारा देय है, सम्मिलित हो सकती है।

धारा 10. क्षति या हानि के लिए कटौती अग्रलिखित है—(1) धारा 7 (2) के खण्ड (ग) और खण्ड (ण) के अन्तर्गत की गई कटौती नियोजित व्यक्ति की असावधानी या चूक के कारण घटित नियोजक की क्षति या हानि की धनराशि से अधिक की नहीं होगी।

(2) ऐसी सभी कटौतियाँ और उससे सम्बन्धित सभी वसूलियाँ (realizations) धारा 3 के अन्तर्गत मजदूरी अदा करने के लिए उत्तरदायी व्यक्ति द्वारा एक पंजिका में यथाविहित प्रारूप में अंकित की जायेंगी।

धारा 11. की गई सेवाओं के प्रति कटौतियाँ अग्रलिखित है—धारा 7 की उपधारा (2) के खण्ड (घ) या खण्ड (ङ) के अन्तर्गत कटौतियाँ किसी नियोजित व्यक्ति की मजदूरी से उस समय तक नहीं की जाएंगी जब तक कि वह आवासीय सुविधा या अन्य सुख-सुविधा या सेवा उस नियोजित व्यक्ति द्वारा नियोजन की शर्त के रूप में या अन्यथा रूप में स्वीकार न कर ली गई हो। ऐसी कटौती उस नियोजित व्यक्ति को दी गई उक्त सुविधाओं के मूल्य से अधिक नहीं होनी चाहिये और खण्ड (ङ) के अन्तर्गत की गई कटौती ऐसी शर्तों के भी अधीन होगी जिन्हें कि राज्य सरकार आरोपित करे।

धारा 12. अग्रिम अदायगी की वसूली से सम्बन्धित कटौतियाँ अग्रलिखित है—धारा 7(2) के खण्ड (च) के अन्तर्गत की गई कटौती निम्नलिखित शर्तों के अधीन होगी—

(क) नियोजन आरम्भ होने के पूर्व अग्रिम रूप में अदा की गई धनराशि की वसूली सम्पूर्ण मजदूरी की अवधि के सम्बन्ध में देय मजदूरी के प्रथम भुगतान से की जायेगी। परन्तु किसी यात्रा व्यय के लिये दिये गये ऐसे अग्रिम धन की वसूली नहीं की जायेगी,

(कक) नियोजन आरम्भ होने के बाद अग्रिम रूप में दी गयी धनराशि की वसूली ऐसी शर्तों के अधीन होंगी जिन्हें कि राज्य सरकार आरोपित करे,

(ख) मजदूरी की ऐसी अग्रिम राशि, जो कि पहले से अर्जित नहीं की जा चुकी है, की वसूली राज्य सरकार द्वारा बनाये गये नियमों के अधीन होगी, जो उस बात को नियन्त्रित करते हों कि इस प्रकार के ऋण किस विस्तार तक दिये जा सकते हैं और किस्तें जिनमें उसकी वसूली की जा सकती है।

धारा 13. सहकारी समितियों और बीमा योजनाओं में भुगतान करने के निमित्त कटौतियाँ अग्रलिखित है–धारा 7 की उपधारा 2 के खण्ड (ञ) और खण्ड (ट) के अन्तर्गत की गई कटौतियाँ ऐसी शर्तों के अधीन मानी जाएंगी जिन्हें कि राज्य सरकार आरोपित करे।

अधिनियम के अन्तर्गत के प्राधिकारी

धारा 14. निरीक्षक–अधिनियम की धारा 4 तीन प्रकार के निरीक्षकों का उपबन्ध करती है, जो अग्रलिखित हैं–

- इसके उपरान्त भी राज्य सरकार ऐसे अन्य व्यक्तियों की, जिन्हें वह उपयुक्त समझे इस अधिनियम के प्रयोजनों के निमित्त ऐसे व्यक्तियों के सम्बन्ध में निरीक्षक नियुक्त कर सकती है जो कि कारखानों और ऐसी सरकार द्वारा राजपत्र की सूचना में यथोल्लिखित औद्योगिक या अन्य संस्थापनों में नियोजित है। राज्य सरकार उन स्थानीय सीमाओं को भी परिभाषित करेगी जिसमें कि ऐसे निरीक्षकों को अपने कार्यों का सम्पादन करना है।
- कारखाना अधिनियम की धारा (1) के अन्तर्गत नियुक्त कारखाना निरीक्षक, इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए ऐसे सभी कारखानों के सम्बन्ध में निरीक्षक माना जायेगा कि उसके लिए निर्धारित स्थानीय सीमाओं के भीतर हैं।
- ऐसे सभी व्यक्तियों के लिए जो कि एक कारखाने से भिन्न किसी रेलवे में नियोजित हैं, जिन पर कि यह अधिनियम लागू होता है, राज्य सरकार इस अधिनियम के प्रयोजनों के निमित्त निरीक्षकों की नियुक्ति करने के लिए सक्षम है।

उपधारा (4) निरीक्षकों की शक्तियों के सम्बन्ध में अग्रलिखित उपबन्ध करती हैं–

- वह एक लिखित आदेश के द्वारा इस बात की अपेक्षा कर सकता है कि ऐसे स्थान पर जैसा कि उल्लिखित किया गया हो, कोई रजिस्टर या इस अधिनियम के अनुसरण में पोषित किया गया अभिलेख प्रस्तुत किया जाय। निरीक्षक उस स्थान पर या अन्यथा रूप में से ऐसे व्यक्तियों के बयान भी ले सकता है जिनका कि बयान लेना इस अधिनियम के प्रयोजनों के पालन में वह आवश्यक समझता है।
- ऐसे रजिस्टरों या दस्तावेजों या उनके किसी अंश को निरीक्षक अधिग्रहीत कर सकता है या उनकी प्रतियाँ ले सकता है जिन्हें कि वह अधिनियम के अन्तर्गत कारित किसी अपराध के सम्बन्ध में संगत मानता है और जिस अपराध में उसके पास विश्वास करने का हेतु है कि वह अपराध नियोजक द्वारा किया गया है।
- इस बात का निश्चय करने के लिए कि क्या इस अधिनियम या इस अधिनियम के अन्तर्गत बनाये गये नियमों का पालन हो रहा है अथवा नहीं निरीक्षक जैसा उपर्युक्त समझे, निरीक्षण और जाँच कर सकता है।
- किसी रेलवे, कारखाना या औद्योगिक या अन्य संस्थापना में किसी भी युक्तिसंगत समय में इस अधिनियम के उद्देश्य के सम्पादन के निमित्त किसी परिसर में निरीक्षक प्रवेश कर सकता है, निरीक्षण कर सकता है और तलाशी ले सकता है। उन्हें इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु जिसकी आवश्यकता समझे, सहायता लेने की शक्ति प्राप्त है।
- वह किसी रेलवे या किसी कारखाना या किसी औद्योगिक या अन्य संस्थापना में नियोजित व्यक्तियों के मजदूरी के भुगतान का पर्यवेक्षण कर सकता है।
- निरीक्षक ऐसी अन्य शक्तियों का प्रयोग कर सकता है जो कि इस अधिनियम के अधीन उसके लिये विहित की जाये।

कर्मचारी भविष्य-निधि योजना एवं प्राधिकारी

धारा 5. कर्मचारी भविष्य-निधि योजना–अधिनियम की धारा 5 सरकार को अधिकृत करती है कि वह अधिनियम के तहत भविष्य-निधि की प्रस्थापना करने के लिए कर्मचारी भविष्य-निधि योजना तैयार करे। यह योजना उन कर्मचारियों वर्ग पर या अधिष्ठानों के वर्ग पर लागू होगी, जिनका उसमें उल्लेख किया गया हो। 'उल्लिखित' शब्द के प्रयोग का तात्पर्य है कि इस विषय में उल्लेख करने में बिल्कुल ही अनिश्चितता नहीं होनी चाहिये कि किन स्थापनों में इस योजना को लागू किया जायेगा। इस योजना को तैयार करने के बाद यथासम्भव शीघ्र इस अधिनियम और योजना के अनुसार एक निधि की स्थापना की जायेगी

योजना तैयार करने के सम्बन्ध में केन्द्रीय सरकार की यह शक्ति न तो प्रतिबन्ध रहित है और न अनिदेशित ही है। केन्द्रीय सरकार के पथ-प्रदर्शन के लिए इस अधिनियम में विभिन्न उपबन्ध किये गये हैं। यह एक असत्य धारणा है कि धारा 5 केन्द्रीय सरकार को योजना तैयार करने के सम्बन्ध में एक अप्रतिबन्धित और अनिर्देशित विवेक की शक्ति प्रदान करती है बल्कि ऐसा प्रतीत होता है कि यह अधिनियम केन्द्रीय सरकार को निर्देशित करने के उपबन्धों से भरा पड़ा है।

धारा 5(1) के अन्तर्गत केन्द्रीय सरकार को दो भिन्न-भिन्न शक्तियां दी गई हैं, यथा (1) एक योजना तैयार करना, और (2) इस बात का उल्लेख करना कि यह योजना किन कारखानों पर लागू होगी। इन दोनों शक्तियों का प्रयोग एक ही अधिसूचना द्वारा किया जा सकता है। इसके उपरान्त भी, जिन कारखानों में इस योजना को लागू किया जायेगा, उन कारखानों का उल्लेख उस योजना में भी किया जायेगा।

धारा 5-क. बोर्ड–केन्द्रीय सरकार एक गजट अधिसूचना के द्वारा उन राज्य-क्षेत्रों के लिए जिन क्षेत्रों में यह अधिनियम विस्तारित है, कर्मचारी भविष्य-निधि के प्रशासन के लिए एक केन्द्रीय बोर्ड गठित कर सकती है। केन्द्रीय बोर्ड उस तिथि से अस्तित्व में आयेगा जिसका कि उल्लेख इस सम्बन्ध में उस अधिसूचना में किया गया हो। इस बोर्ड के सदस्य के रूप में अग्रलिखित व्यक्ति होंगे–

- जिस राज्य को इस सम्बन्ध में केन्द्रीय सरकार निर्दिष्ट करे, उस राज्य का प्रतिनिधित्व करने वाले अधिक-से-अधिक 15 व्यक्ति सरकार द्वारा नियुक्त किये जायेंगे,
- जिन अधिष्ठानों पर यह योजना लागू है, उनके नियोजकों का प्रतिनिधित्व करने वाले अधिक-से-अधिक 10 व्यक्ति इस सम्बन्ध में नियोजकों के मान्य संगठन के परामर्श पर केन्द्रीय सरकार द्वारा नियुक्त किये जायेंगे;
- एक अध्यक्ष और उपाध्यक्ष जिसकी नियुक्ति सरकार द्वारा की जायेगी;
- केन्द्रीय सरकार द्वारा अपने अधिकारियों में से नियुक्त किये गये अधिक से अधिक 5 व्यक्ति;
- जिन अधिष्ठानों पर यह योजना लागू है उनके कर्मचारियों का प्रतिनिधित्व करने वाले अधिक-से-अधिक 10 व्यक्ति इस सम्बन्ध में कर्मचारियों के मान्य संगठन से परामर्श करने के बाद केन्द्रीय सरकार द्वारा नियुक्त किये जायेंगे।